मूल्य रु० ६/
वैशाख-ज्येष्ठ २०५८ मई २००१

स्वदेशी

राष्ट्रीय स्वाभिमान, आर्थिक स्वावलंबन, राष्ट्रीय पुनर्रचना तथा स्वदेशी संदेश की संवाहिका पत्रिका

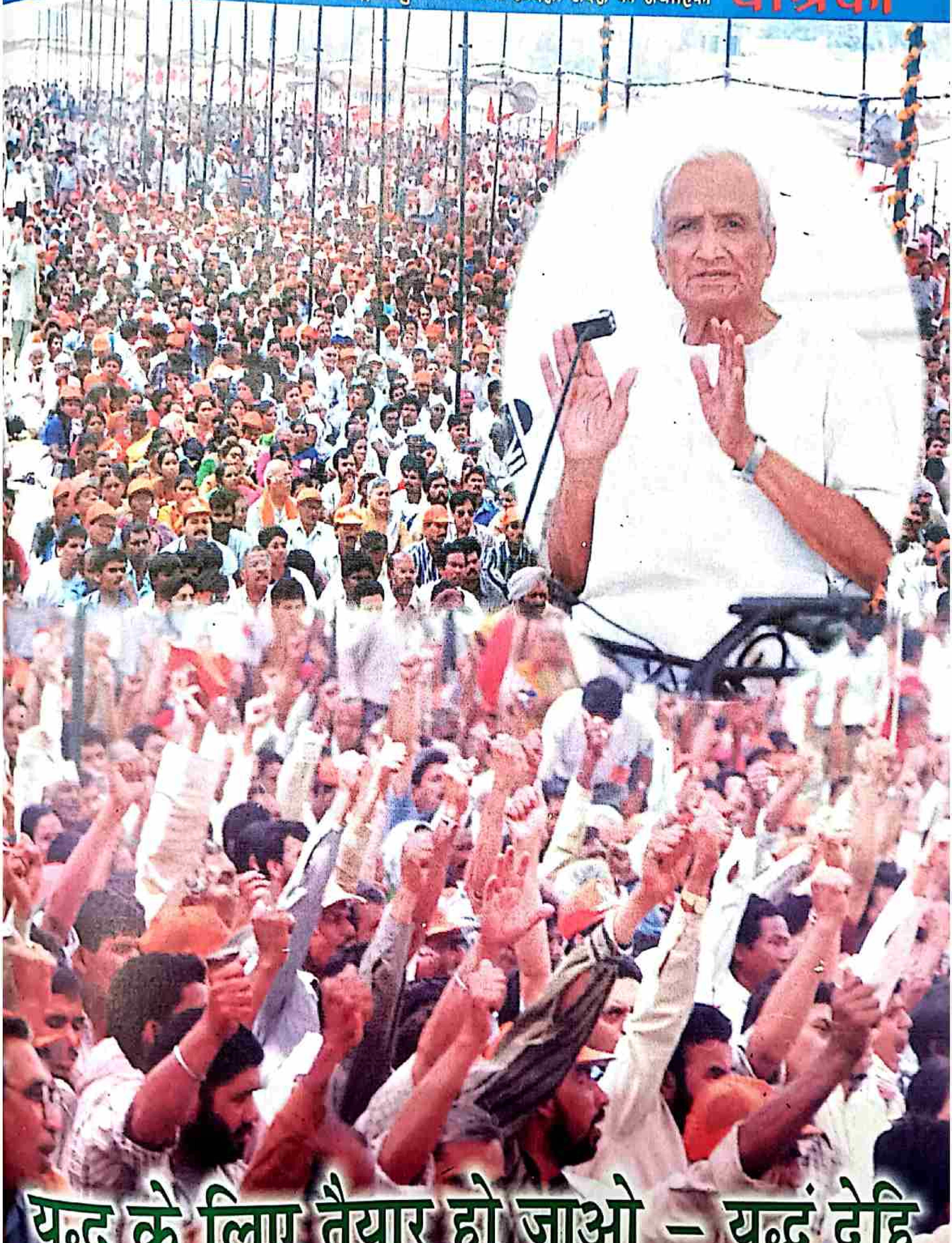

युद्ध के लिए तैयार हो जाओ – युद्धं देहि

Scanned with OKEN Scanner

भारतीय मूल्यों की ओर

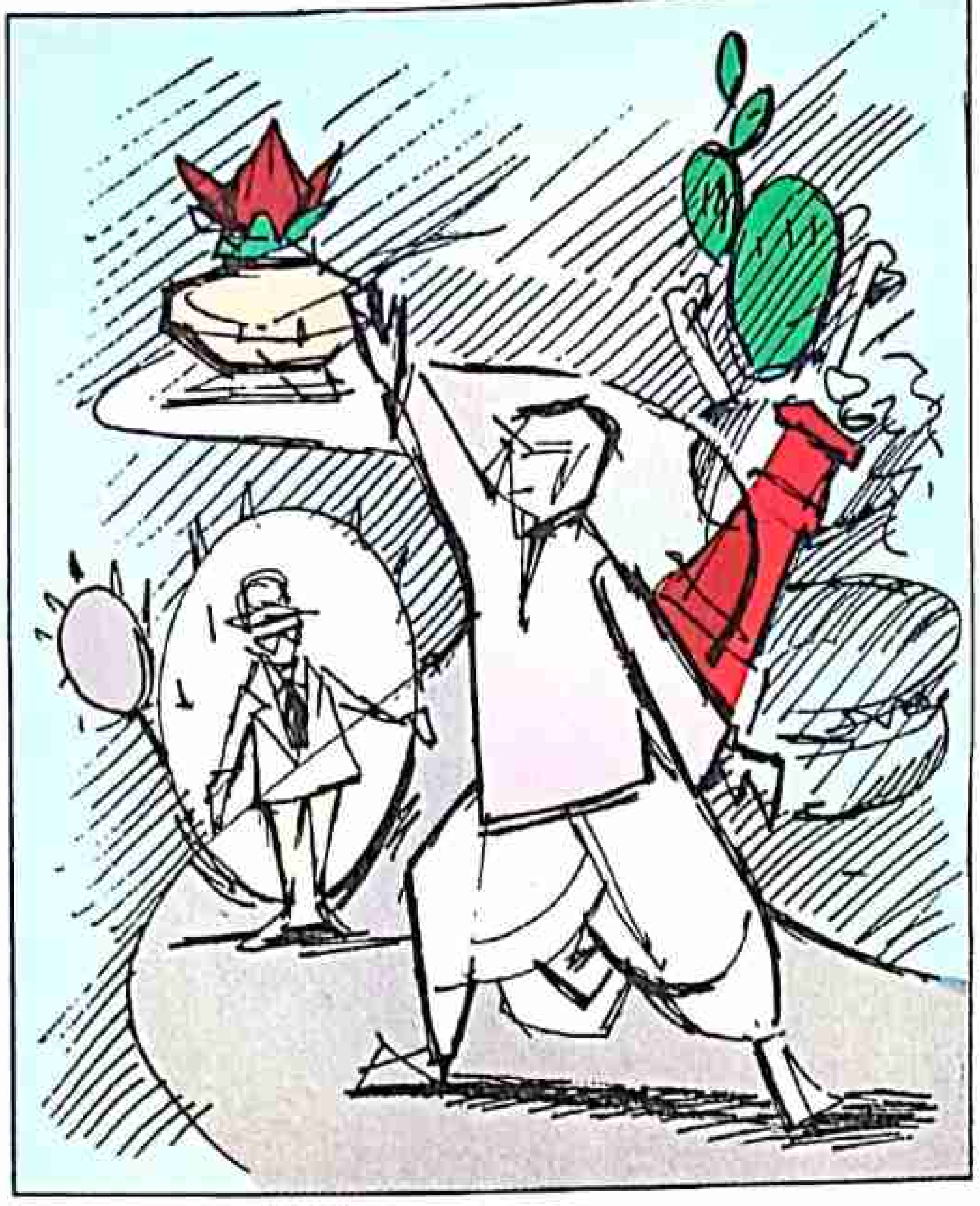

यह कैसी अन्वेषण क्षमता
विश्लेषण पारंगतता
चिर सम्मत शाश्वत मूल्यों की भी
वे खोज रहे प्रासंगिकता!
आवश्यकतायें प्रपंच की
ढालें मन के निश्चय हैं,
लक्ष्य सिद्ध को लिये बहाना
उपजे कोरे संशय हैं।
दुविधाओं का भार उठाये,
अंतिम क्षण के निर्णय हैं
दुर्बलता को शक्ति बतायें
और शक्ति को दुर्बलता।
शीतपेय लग रहे तुष्टिकर
गोरस, तक्र न पीते हैं
फास्टफूड लग रहे पुष्टिकर
गृहविहीन ज्यों जीते हैं
कृत्रिम भोजन भरा उदर में
सरस पथ्य से रीते हैं

कृत्रिमता को पथ्य बतायें
और पथ्य को कृत्रिमता
अंग्रेजी लगती 'गरिमामय'
हिन्दी नहीं ग्राह्य मानें
सूटबूट लगते 'महिमामय'
धोती कालबाह्य मानें
उद्यमियों की दौड़ –
विदेशी ट्रेडमार्क या पहचानें
आग्रहता को तथ्य बतायें
और तथ्य को आग्रहता।
आओ बंधु, स्वत्व पहचानें
तभी बनेगी गुणवत्ता
भारतीय मूल्यों की ओर
निहार रही है मानवता
प्रकृति असंगत बन जाना
अब न हो हमारी उद्यमता
धेनु–धरा से, धर्म–कर्म से
जुड़ निखरे मन की दृढ़ता।

● रमेश कुमार शर्मा
६/१३४ मुक्ता प्रसाद नगर, बीकानेर, राजस्थान

और तेरा देश नरक होता रहेगा

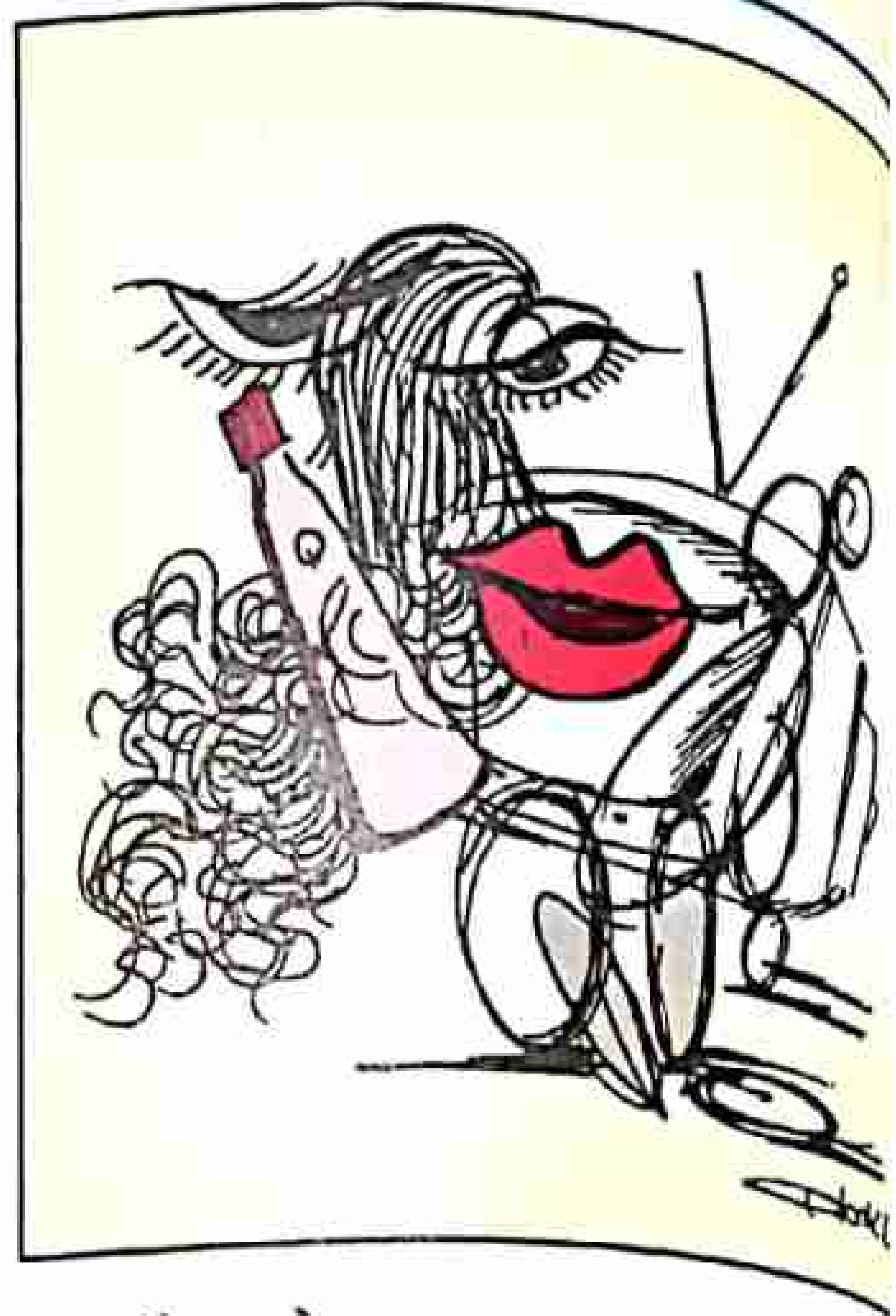

मेरे सामने एक दुकान पड़ा,
मैं सामान लेने आगे बढ़ा।
तब तक एक सुंदर विवाहिता महिला
दुकान पर आई,
साथ में थे उसके पति
गले में लटकाये हुए टाई।
महिला दुकानदार से बोली,
'एक बढ़िया शैम्पू दे दो,
जरा जल्दी करो, ये पैसे ले लो।'
दुकानदार ने एक बढ़िया देशी शैम्पू दिखलाई,
महिला झल्लाई, गरजी और चिल्लाई
बोली – 'तू भी अजीब है भाई,
तूने यह देशी घटिया चीज कहाँ से लाई?
हमे तो विदेशी चाहिए
जिसका विज्ञापन टीवी पर आता है,
जिसको लगाने से छोटा बाल भी लम्बा हो जाता है।
जिसे विज्ञापन–बाला बार–बार लहराती है,
और करोड़ो में कमाती है।'
यह सुनकर मैं चकराया
क्या सभी स्वदेशी चीजें घटिया होती है?
और सभी विदेशी चीजें बढ़िया होती हैं?
'हे आज की भ्रमित पीढ़ी!
जब तक तू विज्ञापन के चक्कर से
बाहर नहीं आयेगी,
छोड़ विदेशी स्वदेशी नहीं अपनायेगी।
तब तक तेरा और तेरे देश का
बेड़ा गर्क होता रहेगा,
तेरे पैसों से देश दूसरे,
स्वर्ग बनेंगे
और तेरा देश
नरक होता रहेगा।'

● अरविंद

Scanned with OKEN Scanner

अपनी वार्ता

प्रिय पाठक बन्धु,

अबकी बार स्वदेशी पत्रिका में समाविष्ट युद्धं देहि की ललकार, मात्रात्मक प्रतिबंध हटने के बाद देश की आयात-निर्यात नीति पर जोरदार लेखन और स्वदेशी की तीव्र होती गतिविधियों की कई रपटें यह संदेश देती हुई लगेंगी कि अब आपके जागने और करने का समय आ चुका है।

आप जीवन के जिस क्षेत्र में हों अपनी जागरुक भूमिका तय करें और स्वदेशी के अभियान में सम्मिलित हों।

नमस्कार।

आपका

प्रमोदकुमार दुबे

अनुक्रम

अग्रलेख

राष्ट्र ऋषि दत्तोपंत ठेंगड़ी ने ललकारा. . . . . .
युद्ध के लिए तैयार हो जाओ - युद्धं देहि............................./६

लेख

आयात-निर्यात नीति
सरकारी तर्कों से अलग है वास्तविकता
देवेन्द्र शर्मा......................../१३

मुक्त बाजार बनने में जहाँ चूक हुई
अवधेश कुमार........................../१५

खेती को तबाह कर देगी नयी आर्थिक-नीति
निरंकार सिंह....................../२२

बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुली छूट : देश की आजादी को गंभीर संकट
मूंगालाल सुरेका...................../२४

विश्व व्यापार संगठन के साथ हुई संधि पर जनमत संग्रह हो
डॉ भरत झुनझुनवाला................/२७

किसानों की तबाही : अंग्रेजों के काले कानून
विनोद कुमार दुबे...................../२६

संस्कृति

संस्कृत और संस्कृति-प्रक्रिया
डॉ. प्रमोदकुमार दुबे................./३३

दृष्टिकोण

चीनी पहेली और भारत
डॉ. अश्विनी महाजन................../४०

स्तंभ

पाठकनामा/४, उन्होंने कहा/४, घर-गृहस्थी/३१, हलचल/४२, समाचार परिक्रमा/४५

संपादकीय कार्यालय : ६०, नार्थ एवेन्यू, नई दिल्ली-११० ००१ • दूरभाष : ३०१८१७५
ई-मेल : swadeshisampark@rediffmail.com

स्वदेशी पत्रिका

वर्ष-६, अंक-८
वैशाख-ज्येष्ठ २०५८, मई, २००१

:: अमर वाणी ::

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतुज्ञाः। ते ना रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

जो आप विद्वानों में भी अत्यंत पूजनीय और मननशील सत्यज्ञानी हैं, वे आप संन्यासी लोग विद्या के उपदेश हमें देवें और कल्याणकारी पदार्थों से हमारी रक्षा करें।

• • •

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये॥

जिन विद्वानों के लिए, सबका निर्माण करने वाली पृथ्वी मीठे दुग्धादि पदार्थ देती है और अखण्डनीय मेघों से भरा हुआ अंतरीक्ष-लोक सुंदर जल देता है, अत्यंत बल वाले यज्ञ द्वारा वृष्टि करने वाले, उन लोगों को उपद्रव न होने के लिए हमें प्राप्त कराइए।

(भक्ति दर्पण)

मुख्य संपादक :
डॉ. महेश चंद्र शर्मा

कार्यकारी संपादक :
डॉ. प्रमोदकुमार दुबे

मूल्य : एक अंक - ६ रुपए
वार्षिक सदस्यता शुल्क - ६० रुपए
आजीवन सदस्यता शुल्क – १०००/-

विशेष सूचना : अपनी सदस्यता सूची एवं सदस्यता फार्म कृपया अपना नाम व पता, पिनकोड सहित साफ-साफ शब्दों में लिखकर भेजें।

Scanned with OKEN Scanner

पाठकनामा

लाभकारी आविष्कारों में भी बाधा डालती हैं सरकारी नीतियाँ

संपादक जी,

कहाँ तक नए आविष्कारों को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार सर्वसुलभ सहयोग का रास्ता अपनाएगी, उल्टे वह पेटेंट शुल्क बढ़ाकर बाधा डालने में लगी है जिससे सर्वसाधारण व्यक्ति नए आविष्कार करने से वंचित हो जाए अथवा वह अपने आविष्कार को किसी पूंजीपति के हाथों सौंपने पर मजबूर हो जाए।

पहले पेटेंट फीस १००/- रुपए और प्रोविजनल स्पेसीफिकेशन ३००/- रुपए होते थे अब सरकार पेटेंट के लिए १५००/- रुपए ले रही है और कम्पीट स्पेसीफिकेशन के लिए ५०००/- रुपए। इससे साधारण वित्त का व्यक्ति नयी खोज करने में अधिक कठिनाई में पड़ेगा। यह सामान्य व्यक्ति के लाभकारी आविष्कार के लिए बाधा है।

ध्यान रखने की बात है कि बड़ी डिग्रीयों वाले विश्वविद्यालयों में बैठे लोग और शोध संस्थानों के बड़े साधनों से कार्य करने वाले लोग ही आविष्कार करने के अधिकारी नहीं होते। यह काम हजारों वर्ष से हमारे समाज में सामान्य आर्थिक स्तर के लोगों ने भी बिना किसी डिग्री के किया है। पर सरकार ऐसे लोगों के महत्व को नहीं समझकर देश का हित नहीं कर रही। यदि सरकार के पास सामान्य व्यक्तियों के स्वतंत्र आविष्कार के सहयोग के लिए साधन नहीं है तो उनके आविष्कार का निःशुल्क पेटेंट होना चाहिए।

– मंगल सिंह
कृषक व अन्वेषक,
ग्राम+पोस्ट भैलोमी लौध (बार) ललितपुर, उत्तर प्रदेश।

बजट की मार

प्रिय संपादक,

अमीरों को साथ और गरीबों को लात मारने वाली सरकारी नीति को प्रकट करने वाला बजट २००१-२००२ का मूल्याँकन श्री मुकुंद गोरे द्वारा बिल्कुल यथार्थ ढंग से किया गया है। ऐसे बजट को किसान-विरोधी, मजदूर-विरोधी और जन-विरोधी कहना उचित होगा। गरीबी और अमीरी की खाई में अपराध का जंगल उगेगा और देश भयावह पारिस्थितियों से घिर जाएगा। आज इसके लक्षण सर्वत्र दिखाए दे रहे हैं। स्वदेशी पत्रिका इस दिशा में लोगों को जगाने का काम कर रही है। इसके लिए धन्यवाद और यह अपेक्षा भी कि विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ रही आत्महत्या और बेरोजगारी की समस्याओं को पत्रिका में स्थान दिया जाना चाहिए।

- ऋत्विक चक्रवर्ती
श्याम बाजार, कोलकता।

उन्होंने कहा

भारत को अमरीका की जितनी जरूरत है उससे अधिक अमरीका को भारत की जरूरत है।

श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी

यदि हम अंतरिक्ष में उपग्रह स्थापित कर सकते हैं तो ऐसा कोई कारण नहीं है कि देश में गरीबी को खत्म न कर सकें।

प्रधानमंत्री
श्री अटल बिहारी वाजपेयी

नौकरशाहों को अपने लिए विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष और दूसरे अंतरराष्ट्रीय संगठनों में नियुक्ति चाहिए और उनके बच्चों को बहुराष्ट्रीय कंपनियों में नौकरियाँ चाहिए। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ यह कर भी रही है। ऐसे में जाहिर है कि नौकरशाही घरेलू उद्यमों की अनदेखी करके बहुराष्ट्रीय कंपनियों की ही ताबेदारी करेगी और वही लोग कर रहे हैं।

सीआईआई के पूर्व अध्यक्ष, उद्योगपति
राहुल बजाज

बढ़ते अपराधों का कारण उन नागरिकों में बढ़ता असंतोष भी हो सकता है, जो किसी एक व्यक्ति या संस्था से बदला लेने के लिए हिंसा का सहारा लेते हैं।

चीन में बढ़ते अपराध से चिंतित चीनी उच्चतम न्यायालय के अध्यक्ष
ज्याओ मांग

भारतीय उद्यमियों को एक जिम्मेदार नागरिक की भूमिका निभानी चाहिए।

सी.आई.आई. के अध्यक्ष
संजीव गोयनका

Scanned with OKEN Scanner

स्वतंत्रता का पुनः अलख जागना भारत का वैश्विक कार्य होगा

परिवर्त्तन ! परिवर्त्तन ! . .मैं कालदेवता परिवर्त्तन !! . .मैं युग निर्माता परिवर्तन !!! – ये पंक्तिया हैं एक कवि की, परिवर्त्तन और युग निर्माण के आधार कालदेवता का समाज से अभेद संबंध बताती हुई। सदा जाग्रत और लोकबोध में उतरे हुए कालदेवता का देश है भारत। निरंतर परिवर्त्तन. . . अविराम युग निर्माण में निहित है कालदेवता का यही शाश्वत कार्य है।

इस कार्य में माध्यम बनें व्यक्ति कर्म और कर्म फल के भोग में बँधे नहीं होते, वे न तो राज पाने के प्रयास में व्यय होते हैं, न राज के भोग में नष्ट होते हैं और न धन की कमाई कर उपभोक्ता बनते हैं। आज भी भारत माता का आँचल ऐसे सपूतों से रहित नहीं है, जिन्होंने परिवर्त्तन और युग निर्माण को जीवन–ध्येय बनाया है। काल द्रष्टाओं की श्रृंखला अभी भी टूटी नहीं है, इसके बावजूद कि अंग्रेजों ने इस देश की मानसिकता बदलने के लिए बड़ा परिश्रम किया। स्वतंत्र भारत के शासकों ने भी इसे मिटाने के अनेक प्रयास किए राजकाज की व्यस्तता के कारण उन्होंने इस काम में दूसरों का लम्बा सहयोग भी लिया। धर्म को अग्राह्य माना गया, राष्ट्रीयता को व्यर्थ बताया गया, भौतिकता को सर्वोपरि बनाया गया। उपभोक्ता बनाने में सहयोगी कार्यों के लिए कम प्रयास नहीं हुए। फिर भी इस देश की मानसिकता सिर्फ उपभोग तक सिमट नहीं पाई। भारत क़ी यही मूलभूत मानसिकता आर्थिक आक्रांताओं से हमारी रक्षा करेंगी। १६ अप्रैल २००१ को भारतीय मजदूर संघ की विराट रैली को सम्बोधित करते हुए श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी ने इस मानसिकता को विजय के लिए आवश्यक बताया। उन्होंने कहा, 'विजय उपकरण के आधार पर नहीं, मानसिकता के आधार पर होती है।' परिवर्त्तनकारी मानसिकता काल के क्षुद्र स्तर में तैयार नहीं होती, काल के विराट फलक पर निर्मित होती है। इसीलिए यह अपराजेय है। भारत की यही शक्ति है, जिसके बल से आज वैश्विक अर्थ–युद्ध में हम अपनी रक्षा और विजय की आशा करते हैं।

बीसवीं शदी के आरंभ में ही वैश्विक परिदृश्य में ऐसे लक्षण दिखने लगे थे जिनके आधार पर कहा जा सकता था कि स्वतंत्रता की नई लहर पूँजीवादी शक्तियों के चंगुल में फँसती चली जाएगी। वैचारिक शक्तियाँ लोकहित के साधनों के अभाव में लक्ष्य पूरा नहीं कर पाएँगी। यदि वह आर्थिक शक्तियों से अपेक्षा करती हैं तो उनकी सामाजिक विश्वसनीयता को आर्थिक शक्तियाँ भुनाने में संकोच नहीं क़रेंगी, और अंततः राजवंशों के शोषण–उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष करके पाई हुई स्वतंत्रता पूँजीवादी ताकतों के हाथों में चली जाएगी। युगद्रष्टा डॉ. हेडगेवार ने कहा था, **'१९२० के बाद विश्व के नव स्वतंत्र देश अधिक तीव्रगति से पुनः एक बार पूँजीवादी देशों के शिकंजों में फँसे हैं और उनको मुक्त कराने का वैश्विक कार्य हमें करना होगा।'**

आर्थिक पराधीनता से विश्व जीवन को मुक्त करने का वैश्विक कार्य करना हमारे संकल्प के अंतर्गत है। इसके लिए परिस्थितियाँ बनती जा रही हैं। संभव है, भारत की इस विश्व भूमिका को राजकाज में व्यस्त और उपभोग में लिप्त हुए दोनों प्रकार के लोग नहीं देख पा रहे हों, पर यह भूमिका निर्मल दृष्टि के मनीषियों से अनदेखी नहीं है और न यह रोज दिन विश्व में बनते आर्थिक शक्तियों के समीकरण और रणनीतियों पर ध्यान रखने वाले नीति कुशल व्यक्तियों से अनजानी है।

अभी अमरीका ने अमरीकी महादेश के चौतीस राष्ट्रों को मिलाकर एक मुक्त व्यापार क्षेत्र बनाने के लिए क्यूबेक कनाडा में सम्मेलन किया है। क्यूबा के राष्ट्राध्यक्ष फिडेल कास्ट्रो इसके खिलाफ सम्मेलन विरोधियों के साथ थे। क्योंकि इन आर्थिक शोषण के षड्यंत्रकारियों ने क्यूबा का भारी शोषण किया था। इसी प्रकार इण्डोनेशिया का भी शोषण हुआ। आज उसे विश्व बैंक आर्थिक सहयोग देने से इनकार कर रहा है, क्योंकि उसके पास कर्ज के पैसे लौटाने की क्षमता नहीं दिख रही। दूसरे कई अन्य देश भी हैं जो शोषित और अल्प साधन सम्पन्न हैं। उनके एकत्रीकरण से विश्व में एक बड़ी शक्ति खड़ी हो सकती है। इनके बीच व्यापारिक संगठन भी बन सकता है। जिस प्रकार विश्व स्तर पर पीड़ित राष्ट्रों का समूह एक समान अनुभव से गुजर रहा है, देश के भीतर भी आर्थिक नीतियों की मार से लोग आत्महत्या करने पर तुले हुए हैं ये राष्ट्र और जनसमुदाय एक बहुत बड़ी वैश्विक शक्ति बनकर मुट्ठी भर शोषकों का अंत कर सकती हैं। इन्हें एक सुदृढ़ नैतिक नेतृत्व चाहिए। निश्चय ही इस वैश्विक शक्ति से एक नया जीवन बोध भी खड़ा होगा। अर्थ के घुटन भरे दायरे से और आगे धर्म के खुले आसमान में विश्व जन–जीवन आएगा। यह धर्म ही वास्तव में मानव की परस्परावलम्बी सच्ची स्वतंत्रता होगा, पर्यावरण और समष्टि का आत्मिक बोध होगा। परिवर्त्तन और युगनिर्माण का यह वैश्विक संकल्प सक्रिय हो चुका है। उपेक्षितों, उत्पीड़ितों, शोषितों की आहें देश में और विश्व में भी एकत्र होती जा रही है, और यही से कालदेवता का परिवर्त्तन चक्र ध्वंस और सृजन की संयुक्त भूमिका पूरी कर देगा।

Scanned with OKEN Scanner

अग्रलेख

राष्ट्र ऋषि दत्तोपंत ठेंगड़ी ने ललकारा . . . . .

युद्ध के लिए तैयार हो जाओ – युद्धं दे

१६ अप्रैल २००१ को भारतीय मजदूर संघ की ओर से आयोजित लगभग एक लाख ध्येय निष्ठ मजदूर-कामगार लोगों की रैली ए
शक्ति प्रदर्शन के रूप में चर्चा का विषय बन चुकी है। राष्ट्रीय अखबारों और अन्य सूचना माध्यमों ने जिस उत्साह से इस रैली के उद्दे
शक्ति को लिया, उससे कम उत्साह से क्षेत्रीय अखबारों ने नहीं लिया। अबकी बार की रैली का प्रभाव सामने यह आया है कि देश क
गाँवों-देहतों में रहने वाले किसान, छोटे बाजारों तक के खरीददार और लघु उद्यमियों के बीच वर्तमान समय के बढ़ते अंधकार और घोर
में श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी की चर्चा एक मात्र आधार के रूप में होने लगी है। किसी को यह लग रहा है कि फिर एक नए महात्मा गाँधी का
हो रहा है, कोई यह कह रहा है कि लोकनायक जयप्रकाश की तरह फिर एक बड़ा नेतृत्व देश में आ चुका है। किसी के मुँह से अधूरे
के तो किसी के मुँह से सम्पूर्ण क्रांति के उद्देश्यों के पूरा होने की बातें सुनने को मिल रही है। वास्तव में आज जिस प्रकार का अंत
आर्थिक युद्ध का रण छिड़ हुआ है, वैश्विक धरातल पर प्रत्येक महत्वपूर्ण उत्पादन, सूचना और घटना का भी प्रभाव आँका जा रहा
नेतृत्व का दायरा भी क्षेत्र प्रांत और राष्ट्र से आगे विश्व स्तर तक फैल गया है। इस समय की समस्याओं के लिए सामान्य प्राणिक
व्यक्ति नेतृत्व में सक्षम हो भी नहीं सकता। इसके लिए व्यष्टिनिष्ठ सत्ता आकांक्षी नेतृत्व की उपयोगिता नहीं हो सकती। इसके लिए
व्यक्ति की आवश्यकता है। इसके लिए समष्ठिनिष्ठ व्यक्ति की जरूरत है।

जिस व्यक्ति की आकांक्षा केवल देश के सबसे बड़े राजकीय पदों तक सीमित हो, राज्य व्यवस्था से बड़ी शक्ति-सत्ता के विषय
कल्पना और आकांक्षा तक नहीं हो, वह आज के वैश्विक नेतृत्व के योग्य नहीं हो सकता। आज विश्व की आर्थिक शक्तियों ने राज्य
को अपने अधिकार में ले लिया है। राज्य शक्ति अपने उद्देश्यों से भटक चुकी है। आज के बुद्धिजीवी यह कह रहे हैं कि विकास ह
लोग मरेंगे ही, गरीबी बढ़ेगी ही। ऐसी अमीरी को भारतीय ऋषि चिंतन में अपराध माना गया है, ऐसी व्यवस्था को राज कहा ही नहीं
जिसमें बड़ी मछली छोटी मछली का भक्षण कर रही है। शास्त्रों का कहना है कि यह राज्य व्यवस्था का नहीं, अराजकता अर्थात् राज
दशा का लक्षण है। भारत के मनीषियों ने राज्य व्यवस्था तो उसे कहा जिसमें सबके अस्तित्व का परस्परावलम्बी पोषण होता है।

यूरोप के देशों का आर्थिक गुट हो, या अमरीका के देशों का अथवा उत्तर पूर्वी देशों का गुट – क्या इनके निर्माता बड़े-बड़े व्यवसायियों के इशारे पर नहीं नाच रहे? ऐसे समय में जनशक्ति का वास्तविक नेतृत्व वही कर सकता है जिसके सामने राजनीति के बड़े से बड़े पदों का कोई महत्व नहीं रहा हो, जो दुख में तप रहे प्राणियों के कष्ट को नाश करने की आकांक्षा के आगे राज्य की स्वर्ग या मोक्ष की कामना को भी व्यर्थ समझता हो। यह संकल्प कोई परिकल्पना मात्र नहीं है। इस संकल्प को अपने चरित्र में उतारने वाले महापुरुषों की श्रृंखला भारत में रही है। ऐसे ही पूर्व महापुरुषों के संकल्प पथ पर जीवन के आठ दशकों के पार तक अविराम चलते रहने वाले राष्ट्र-ऋषि श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी आज जन-जन की पीड़ा के निवारण का स्वर बन चुके हैं।

अप्रैल १९९९ में हुए भारतीय मजदूर संघ के बारहवें अधिवेशन में उन्होंने कहा था कि यह सरकार पूर्व की सरकारों से भिन्न होगी और आर्थिक मोर्चे पर राष्ट्रवादी नीतियों का ही अवलम्ब करेगी। उन्हें बड़ी आशा थी कि जनता के हित को कुचलने वाली नीतियों से यह सरकार अवश्य परहेज करेगी। इसी प्रकार २५ फरवरी १९९९ को रामलीला मैदान में हुए एक विशाल रैली को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा – 'जमेका में हुए जी-१५ देशों के सम्मेलन में विकासशील देशों की अगुआई करने और स्वदेशी का पक्ष रखने के लिए प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी बधाई के पात्र हैं।' प्रधानमंत्री को नवंबर में होने वाले सिएटल के डब्ल्यू.टी.ओ. के सम्मेलन में विकासशील देशों के नेतृत्व के लिए जाना चाहिए। अटल बिहारी वाजपेयी ही तीसरी दुनिया के देशों का नेतृत्व करने में सक्षम हैं। विकासशील देशों को एक मंच पर लाने के लिए उन्हें पहल करनी चाहिए। उन्होंने मंच से नारा दिया था – 'वाजपेयी जी आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं।' लेकिन इस आशा का भी कोई प्रतिफल सामने नहीं आया। इसके विपरीत सरकारी नीतियाँ जनहित के विरोध करती हुई और आगे बढ़ती गई। राष्ट्रहित को विश्व व्यापार संगठन के आगे उपेक्षित होते देखकर देश के राजनैतिक नेतृत्व के उत्साहवर्द्धन के लिए संभवतः एक भी ऐसा पक्ष नहीं होगा जिसे उन्होंने नहीं बताया हो. राष्ट्रहित और वैश्विक नेतृत्व के लिए बार-बार प्रेरित नहीं किया हो।

१६ अप्रैल को हुई भारतीय मजदूर संघ की रैली में भी उन्होंने विकसित देशों के नेतृत्व की सरकार से अपेक्षा तो की, लेकिन अबकी बार उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि यदि सरकार विश्व व्यापार संगठन को प्रश्रय देती चली गयी तो हम इस सरकार का भी विरोध करेंगे। यह हमारी स्पष्ट नीति है। उन्होंने कहा कि हम माँग करते हैं कि विश्व व्यापार संगठन के प्रतिस्पर्धी विश्व व्यापार संगठन को सरकार खड़ा करे, सरकार खड़ा नहीं करती है तो हम लोग करेंगे। उत्तरदायी सहयोगी की नीति को एक बार पुनः आवश्यक समझते हुए श्री ठेंगड़ी जी ने उसे व्यवहार में लाने की बात की। ■ **प्रमोद दुबे**

श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी द्वारा दिए गया यह जनसम्बोधन आज के जटिल वैश्विक परिस्थिति में अत्यंत महत्वपूर्ण है। स्वदेशी पत्रिका उनके पूरे भाषण को अपने पाठकों के लिए प्रस्तुत कर रही है। ताकि यह जनसम्बोधन हमारे लिए धरोहर बन सके। –सं.

भारतीय मजदूर संघ, भारतीय किसान संघ और स्वदेशी जागरण मंच के संस्थापक

राष्ट्र ऋषि दत्तोपंत ठेंगड़ी द्वारा १६ अप्रैल २००१ को भा०म०सं० की रैली में किया गया जन-सम्बोधन

(भाषण के पूर्व आगंतुक श्रोताओं के स्वर - भारत माता की जय)

मंच पर उपस्थित माननीय पदाधिकारीगण, देश के कोने-कोने से आए हुए भाइयो एवं बहनो, यहाँ उपस्थित पत्रकार बंधुगण!

मैं भाषण के प्रारंभ में क्षमा याचना करना चाहता हूँ। क्षमा याचना इसलिए कि मैं बैठकर बोल रहा हूँ। यह धृष्टता है, मैं जानता हूँ। पिछले वर्ष दो बड़े ऑपरेशन होने के कारण जो कमजोरी आई उस कमजोरी के कारण ज्यादा देर तक खड़े रहना मुश्किल हो जाता है। इसलिए आप मुझे बैठकर बोलने के लिए माफ करेंगे।

विभिन्न प्रदेशों से आए हुए हमारे जो कार्यकर्त्ता हैं, उनका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। वैसे तो रामलीला मैदान पर हमेशा ऐसी रैलियाँ होती रहती हैं। लेकिन उसका ढंग अलग होता है। उन रैलियों को आयोजित करनेवाले लोग अपना पैसा खर्च करके लोगों को ट्रकों में भर कर उन्हें एक दिन की रोटियाँ देकर लाते हैं। आप लोग ऐसे किराए के टट्टू नहीं हैं। (आगंतुक श्रोताओं में गूँज उठा – भारत माता की जय) आप यहाँ स्वयं का पैसा खर्च करके आए हैं, आप ध्येयवादी कार्यकर्त्ता हैं किराए के टट्टू नहीं, जो रामलीला मैदान पर हमेशा दिखाई देते हैं। इसलिए मैं आपका हृदय से स्वागत करता हूँ।

वास्तव में इतनी बड़ी संख्या में आए हुए लोगों की व्यवस्था करना बहुत कठिन कार्य है। लेकिन बड़ी संख्या में हमारे बंधुओं ने दिन-रात मेहनत करके यह कार्य किया है। उन्होंने इस रैली के लिए आदर्श व्यवस्था की है। भारतीय मजदूर संघ के कार्यकर्ताओं और सहयोगी संस्था के कार्यकर्ताओं सहित हमारे अन्य सहयोगी भी एक साथ मिलकर यहाँ एक आदर्श व्यवस्था की है। मैं उनको धन्यवाद देना चाहता हूँ।

यहाँ आने के बाद हमने देखा कि इस रैली के लिए मीडिया ने भी पूरा सहयोग दिया। मैं मीडियो का भी आभारी हूँ। वैसे मीडिया के लोग जानते है कि भारतीय मजदूर

Scanned with OKEN Scanner

संघ अन्य कई संस्थाओं और नेताओं के समान सस्ती लोकप्रियता या प्रचार के पीछे नहीं जाता है। जैसे हम औद्योगिक क्षेत्र में कहते हैं कि आवश्यकता आधारित न्यूनतम पारिश्रमिक (Need based minimum wage) हरेक को मिलना चाहिए। वैसे ही आवश्यकता आधारित न्यूनतम प्रचार (Need based minimum publicity) मजदूरों को मिलनी चाहिए. यह आपसे हमारी प्रार्थना है। हम उन लोगों में नहीं है जो सस्ते प्रचार में विश्वास रखते हैं, जो छवि निर्माण (इमेज बिल्डिंग) में विश्वास रखते हैं।

आज हिन्दुस्थान में सभी संस्था के लोग छवि निर्माण (इमेज बिल्डिंग) के प्रयास में हैं। ऐसी संस्थाओं के एक व्यक्ति-दो व्यक्ति का इमेज बिल्डिंग करने से उनका काम बढ़ेगा या देश का भला होगा, मुझे ऐसा नहीं लगता। वास्तव में इस विषय का शास्त्रीय अन्वेषण (scientific study) एक व्यक्ति ने किया है। उसका नाम है पिटर ड्रकर। अपने अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर पिटर ड्रकर ने कहा है कि छवि निर्माण (image building) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें हर तरह से नुकसान होता है। पिटर ड्रकर कहते है कि छवि निर्माण (image building) के प्रयास में लाभ होता दिखता है, लेकिन जिस व्यक्ति की छवि (image) आप बनाते हैं, उसका दिमाग भी बिगड़ जाता है। आपका संगठन खोखला हो जाता है और देश का भी नुकसान होता है। स्टालिन, हिटलर, मुसोलनी इन सबका उदाहरण देकर पिटर ड्रकर ने ये बातें कहीं हैं। अपनी पुस्तक के एक अध्याय में उन्होंने एक बात कही है कि यह करिश्मा का खेल है। लेकिन न्यूनतम प्रचार (minimum publicity) जिसके कारण मजदूरों को क्या कहना है – यह जनता की सरकार के सामने आ जाए। इतना सहयोग चाहिए, इसके लिए मैं आभारी हूँ कि मुझे अच्छा सहयोग मिला है। आगे भी इसी तरह का सहयोग मुझे देते रहेंगे, मुझे ऐसा विश्वास है। इसके लिए मैं सभी पत्रकारों का भी आभारी हूँ।

आगे के विषय की जानकारी आपको होगी। यह सभी समाचार पत्रों, टीवी, रेडियो में आता है, सभी भाषाओं में आता है और जिसे पहले सबने सुना है उसी को दोहराने का

ऐसी दिखी - रैली की तैयारी और रैली

१५ अप्रैल की दोपहर को हम भारतीय मजदूर संघ की ऐतिहासिक राष्ट्रीय रैली की तैयारी देखने के लिए रामलीला मैदान और वहाँ से लालकिला के पीछे उस स्थान पर गए जहाँ रैली के लिए देश के कोने–कोने से आने वालों के ठहरने की व्यवस्था की गई थी। एक कार्यकर्ता से हमने पूछा, रैली में कितने सहभागियों के आने की आशा है? कार्यकर्ता ने सामने पड़ी सूची देखकर कहा, 'इस सूची में सिर्फ एक जोन से आने वालों की चौतीस हजार संख्या है, इस प्रकार के चार जोन हैं।' इससे स्पष्ट हो गया कि एक लाख से कम लोग रैली में नहीं होंगे।

✿ ✿

अगले दिन सोलह अप्रैल को निर्धारित समय पर रैली आरंभ हुई। लालकिला से रामलीला मैदान तक पंक्तिबद्ध सहभागियों का आना प्रारंभ हुआ। भारतीय मजदूर संघ के भगवा बाने से दिल्ली की व्यस्त सड़कें रंग गई, नारों की गूँजें उठी, भारत माता की भक्ति के भाव लहराए।

✿ ✿ ✿

व्यवस्था में तैनात पुलिसकर्मियों के चेहरें पर किसी प्रकार का तनाव नजर नहीं आया, संभवतः रैली में भाग लेने आए लोगों के अनुशासन को देख उन्हें सुखद अनुभव हो रहा था। इतनी बड़ी संख्या में आए हुए लोगों से भी दिल्ली की व्यस्त सड़कों पर यातायात में कहीं कोई व्यवधान नहीं दिखा। सड़क के किनारे कतार से लगातार रैली के सहभागी चले जा रहे थे। राष्ट्रहित के इन कृत संकल्पी लोगों के लिए आत्मानुशासन स्वयं नियंत्रक था, इनके लिए किसी प्रशासनिक व्यवस्था की जरूरत नहीं थी।

अर्थ है आपके समय का दुरुपयोग
दृष्टि से कुछ प्रमुख बातें ही मैं आ
रखना चाहता हूँ।

पहली प्रमुख बात, हमें
देता है कि वित्त मंत्री बनने, शपथ
के बाद उनको एक बीमारी हो
अंग्रेजी में कहते हैं 'एम्नेशिया'
कुछ भूलना, कोई कुछ कहे भूल
कौन हूँ? कहाँ से आया? कहाँ जा
भी याद नहीं रहना यही एम्नेशिया है
'एम्नेशिया' वित्त मंत्री को हो जा

मलेशिया के महातिर मुहम्म
कमीशन बनाया था। उसका नाम
कमीशन'। तंजानिया के जुलियस
अध्यक्ष थे एवं उसके प्रमुख सचिव
डॉ. मनमोहन सिंह। डॉ. मनमोहन
वैचारिक नेतृत्व में एक रिपोर्ट
रिपोर्ट आप देख सकते हैं। चैलेंज टू
(Challange to the South) उ
का नाम है। उसकी भूमिका में उन
है कि हम लोग पर जो आर्थिक स
रहा है, उसका प्रतिवाद करना चाहि
लिए विकसनशील देशों को
साउथ-साउथ कॉपरेशन (South
Cooperation) करना चाहिए। ये
हैं जो हम बोलते हैं। लेकिन क्या
आई कि उन्होंने जैसे ही वित्तमंत्री
ली, सब भूल गए। पूर्ण विस्मृति
Amnesia) हो गयी। उन्होंने पहले
बोला था, ठीक उसके विपरीत का
प्रारंभ किया। जैसे डॉ. मनमोहन
किया। वैसी ही यशवंत सिन्हा के
भी हालत है। मैं आपसे कह रहा हूँ
यह झूठ होगा तो वह प्रतिवाद करें

स्वदेशी जागरण मंच की चिंत
नागपुर में हुई। उस बैठक में यशवं
जी ने भी हिस्सा लिया था। उस
यशवंत सिन्हा जी ने दुख व्यक्त किय
विश्व व्यापार संगठन में सम्मिलित
हमारा सब तरह से नुकसान हो रहा
हमारी संप्रभुता भी खतरे में पड़ स
हमें निश्चय ही विश्व व्यापार संग
देना चाहिए (We must quit WTO
यशवंत सिन्हा जी ने कहा था। लेकिन
जैसे ही वित्त मंत्री की शपथ ली, पूर्ण

(Total Amnesia) हो गयी। वह सबकुछ भूल गए। उन्होंने जो बोला था, उसके ठीक विपरीत व्यवहार करना शुरू किया।

मैं अलग-अलग देशों में पत्र लिखना-चाहता हूँ (व्यंग्य में) कि यदि राजनेताओं की एम्नेशिया का काई इलाज मेडिकल साइंस में हो तो वे हमें जरा बताएँ। इन दिनों यशवंत सिन्हा जी हमें बताते हैं कि हमारी अर्थव्यवस्था बहुत प्रगति कर रही है, यह तो अभिनन्दनीय बात है। अब पहला ही कदम इस बजट के समय उठाया गया है, वह आश्चर्यजनक है।

१९४३ के बाद ऐसा कभी हुआ नहीं था। यशवंत सिन्हा जी ने श्रम मंत्रालय के क्षेत्राधिकार में अवैध हस्तक्षेप किया है। जो काम श्रम मंत्रालय का है जिस काम को करने के लिए राष्ट्रीय श्रम आयोग की स्थापना की गई है। श्रीमान् रवींद्र वर्मा की अध्यक्षता में जिसका काम चल रहा है। इन्होंने उसके क्षेत्राधिकार में उसके कानून में परिवर्तन करने की संसद में घोषणा की है। कानून की भाषा में बताना चाहता हूं कि यह अपराध है। संविधान की दृष्टि से भी यह अपराध है। और यशवंत सिन्हा जी के लिए मैं कहूँगा कि इस दृष्टि से मिस्टर यशवंत सिन्हा इज़ ए क्रिमिनल। मेरे-आपके लिए जो श्रम की मर्यादा थी, वह खत्म की गई। इसके कारण लाखों मजदूर आज असुरक्षित हो गए हैं। 'कांट्रैक्ट लेबर' फिर से शुरु हो जाएगा। यानि यह हर तरह से बात मजदूरों के खिलाफ जाने वाली है।

दूसरी बात, इस समय इनका कहना है कि नई आर्थिक नीति (New Economic Policy) काफी सफल हो रही है। मैं सिन्हा जी से पूछना चाहता हूँ कि आपकी कौन-कौन-सी नीतियाँ सफल हुई है? बताइए, आपने कहा था कि बजट के कारण बहुत बड़ा विदेशी निवेश होगा। विदेशी निवेश से कितना पैसा आया? इससे कितना विकास दर बढ़ेगा? लक्ष्य तक आप पहुँचे हैं क्या? आपने विनिवेश की बात की। क्या हुआ उसका? मॉडर्न फूड कूड़े के भाव बेचे गए। इसमें ज्यादा बोलने की आवश्यकता नहीं। कूड़े के भाव मॉडर्न फूड का विनिवेश किया गया। आज मॉडर्न फूड बीमार है। बाल्को का मामला आपके सामने है। मैं मानता हूँ कि विनिवेश मंत्री अरुण शौरी ईमानदार है। मैं अरुण शौरी की ईमानदारी पर प्रतिवाद नहीं करता। लेकिन या तो बाह्य दबाव के कारण या नीचे से नौकरशाहों द्वारा गलत सलाह के कारण उन्होंने बाल्को का समझौता किया है। वह समझौता पूरा का पूरा झूठ है, फ्रॉड है। ये दोनों परस्पर विरोधी बातें, मैं कह रहा हूँ। और इसका भी वही नतीजा होने वाला है जो नतीजा मॉडर्न फूड का हुआ। अरे, वह तो लाभ में चल रहा था, उसे क्यों बेच रहे हो?

सरकार की ओर से दुष्प्रचार बहुत चलता है, कि सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहा है। उनका हम निजीकरण करेंगे। कौन-सा सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहा है, यह सरकार को पता है क्या? मंत्री और प्रधानमंत्री को पता है क्या? ये लोग नौकरशाह जो कहेंगे, वही मानकर चलते है। मैं आपको बताना चाहता हूँ कि यदि बहस हुई, जाँच हुई तो मैं उनके सामने तथ्य देने के लिए तैयार हूँ। कई तथ्य ऐसे हैं जिनसे यह स्पष्ट है कि सार्वजनिक उद्योगों को जानबूझकर घाटे में ले जाया गया है। और कहा तो यह भी जा रहा हैं कि घाटा मजदूरों के कारण हो रहा है। यह घाटा मजदूरों के कारण नहीं हो रहा है। वे इस तरह से गलत प्रबंधन कर रहे हैं कि आपका सार्वजनिक उद्योग घाटे में जाए, ताकि उसे आसानी से इस आधार पर दूसरों के हाथों बेचा जा सके। क्योंकि जिसके हाथ में जाएगा वे पहले ही पैसे आपके जेब में रख देते हैं। वे उन्हें खरीद लेते हैं, ऐसा आप समझ लीजिए। अधिकांश नौकरशाह बिकाऊ है, बहुत सारे पहले से बिके हुए है। वे झूठी रिपोर्ट देते हैं कि सार्वजनिक उद्योग घाटे में जा रहे हैं। मैं चुनौती देकर कहना चाहता हूँ कि संयुक्त समिति बैठाइए, हम लोगों को भी उसमें बैठाइये। हम बता सकते हैं, ये उद्योग घाटे में नहीं जा सकते अपितु सही ढंग से प्रबंध किया तो लाभ में जाएँगे। इस चीज को करने की जिम्मेवारी हम लेते हैं। आप विदेशियों से पैसे लेकर अपने देश के साथ गद्दारी करते हुए एक-एक सार्वजनिक उद्योग को गलत प्रबंधन के कारण घाटे में धकेल रहे हैं। ऐसे कौन-कौन गद्दार हैं, उन्हें पता करने की आवश्यकता है। हम उन्हें किसी कीमत पर नहीं छोड़ सकते हैं।

अब एनरॉन का मामला है। गोडबोले समिति ने अपना अंतरिम रिपोर्ट दिया है। हम पहले से मांग कर रहे हैं कि एनरॉन का जो समझौत हुआ, वह स्पष्ट रूप से गलत था। यह समझौता कैसे हुआ? कौन-कौन से राजनीतिक दल उसमें शामिल थे? कौन-से नौकरशाह उसमें शामिल थे और जो पुनर्समझौता हुआ, उसके लिए कौन-कौन जिम्मेवार है? और खासकर जब तेरह दिन की सरकार थी उन दिनों, जब दूसरे दिन वही सरकार जाने वाली थी हड़बड़-गड़बड़ करके चार लोगों को मिलाकर और बताया गया कि

❁ ❁ ❁ ❁

रामलीला मैदान में बना विशाल पंडाल आगंतुकों से भर गया। यहाँ अपराह्न दो बजे से भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक श्री दत्तात्रेय बापूराव उपाख्या दत्तोपंत ठेंगड़ी रैली को सम्बोधित करने वाले थे। मंच के ठीक सामने खाली स्थान में समाचार माध्यमों के अनेक कैमरे खड़े होने लगे थे। इसके बाएँ पत्रकार दीर्घा वरिष्ठ पत्रकारों से भरती जा रही थी और दाहिनी ओर लगी कुर्सियों पर स्थानीय गणमान्य लोग स्थान ले रहे थे। मंच पर श्रीमती गीता बेन गोखले, श्री हँसुभाई दवे, श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, श्री रमणभाई शाह, श्री आर. वेणुगोपाल, श्री केशुभाई ठक्कर तथा श्री आशा ताई मांडलिक विराजमान थे और मंच संचालन के लिए भारतीय मजदूर संघ के अखिल भारतीय संगठन मंत्री श्री ओम प्रकाश आग्घी तत्पर थे।

❁ ❁ ❁ ❁ ❁

मंच के सामने घनी कतारों में बैठे रैली के सहभागियों की विशाल संख्या प्रतिबद्धता और अनुशासन का उदाहरण प्रस्तुत कर रही थी। एक अचल विश्वास और गहरी आस्था उन प्रतिभागियों को व्यवस्थित किए हुई थी। भगवे पताकों और टोपियों का दृश्य इतनी दूर तक फैला था कि उसका अंतिम छोर दिखाई नहीं दे रहा था। सभा भारत माता की जयकार से बार-बार गूँज उठती, जिससे वातावरण प्राणवान हो जाता था।

Scanned with OKEN Scanner

केंद्र सरकार ने काऊण्टर गारंटी दी है। यह जो चालाकी है किसने की है? यह सारा सामने आना चाहिए, स्पष्ट होनी चाहिए। पूरी छानबीन होनी चाहिए और यह गड़बड़ी करने वाले लोगों को छोड़ना नहीं चाहिए। उन्हें पहचानना और दण्डित करना चाहिए। नहीं तो इस तरह की गड़बड़ हमेशा चलती रहेगी। एनरॉन के बारे में हमारा कहना है कि एनरॉन को ध्वस्त कर देना चाहिए (Enron should be scrapped)। फिर क्या होगा क्या नहीं, विचार करने की कोई जरूरत नहीं है। एनरॉन निश्चय ही वापस जाए (Enron must go back.)।

हमारा भारतीय मजदूर संघ कुछ रीति-नीति लेकर चला है। हमारी नीति इस प्रकार है, जिसे कहते हैं उत्तरदायी सहयोग (Responsive cooperation)। इसका मतलब यह है कि सरकार में पार्टी कौन-सी है, इससे हमको लेना देना नहीं है। जो भी सरकार हो, उसकी नीतियाँ राष्ट्र और मजदूरों के लिए अच्छी है या बुरी, हम यही देखने वाले हैं।

हम सरकार का उसी स्तर तक सहयोग करेंगे जिस स्तर तक सरकार जनता, मजदूर और देश का सहयोग करेगी। लेकिन हम उस स्तर तक सरकार का विरोध करेंगे जिस स्तर तक सरकार जनता, मजदूर और देश का विरोध करेगी। सरकार की नीति क्या है इसको देखकर हम अपना रुख तय करते हैं। कौन-सी पार्टी सरकार में है यह हमारे लिए महत्व की बात नहीं है। पार्टियाँ तो आती रहती हैं। यह प्राचीन राष्ट्र है। यहाँ कितनी ही पार्टी आयी है कितनी ही सरकारें आती रहेंगी है।

बहुत लोग हमसे प्रश्न पूछते हैं कि अरे भई आपकी रैली से सरकार को धक्का लगने वाला है। हमने कहा कि हमारे रैली के कारण सरकार को धक्का लगने वाला नहीं है। सरकार स्वयं को धक्का लगाने का काम स्वयं ही कर रही है। उसमें हमारी आवश्यकता नहीं है। किंतु सरकार जाने से क्या होगा, इसका सब लोगों को ख्याल रहता है। एक पार्टी की सरकार जाने के बाद दूसरी किस पार्टी की सरकार आएगी, यह सोचना ही गलत है। एक पार्टी की सरकार जाएगी तो दूसरी पार्टी की आएगी। परिणाम एक समान रहेंगे। श्रेष्ठ राज्य व्यवस्था के लिए जागरुक जनशक्ति, नित्यसिद्ध जनशक्ति होनी चाहिए जो किसी भी पार्टी की सरकार हो, उसके लिए अंकुश का काम करे। एक प्रधानमंत्री के जाने एवं दूसरे प्रधानमंत्री के आने से विकल्प में बड़ा फर्क होगा ऐसा महसूस नहीं होता है। हमारे यहाँ पुराणों में कहा गया है राजसत्ता हाथी के समान होती है। लेकिन जब कोई हाथी मेरे बगीचे में या आपके जंगल में घूम रहा होता है तो क्या आप हाथ पर हाथ रखकर कहेंगे कि हे भगवान, हाथी जी का मूड अच्छा रखो, नहीं तो मेरा बगीचा खराब हो जाएगा, मेरा जंगल ध्वस्त हो जाएगा। हमें ऐसी प्रार्थना नहीं करनी चाहिए। किंतु यदि हाथी गड़बड़ करेगा तो? तो प्राचीन परंपरा है कि समाज में नैतिक नेतृत्व का निर्माण हो। यही नैतिक नेतृत्व (मोरल लिडरशिप) हाथी के लिए समाज के हाथ का अंकुश है। जो राष्ट्रभक्त लोगों का जन संगठन है, वही सत्ता का अंकुश है, जो नैतिक नेतृत्व के हाथ में रहता है। हाथी ठीक काम करता है तो ठीक है। हाथी गड़बड़ करना शुरु करता है तो हाथी के गण्डस्थल पर नैतिक नेतृत्व का अंकुश दबाएंगे तो हाथी को चीं-चीं करके बैठना पड़ेगा। जागरुक, प्रशिक्षित, नित्य सिद्ध जन शक्ति सभी सरकारों के ऊपर अंकुश है। सरकार आए या सरकार जाए किंतु राष्ट्र निरंतर गतिमान रहेगा (The government may come the government may go but the nation will go on for ever)। इस दृष्टि से हम लोग एक स्थायी विकल्प के रूप में 'जन शक्ति' का निर्माण करने के लिए इच्छुक हैं। इसलिए यह रैली बुलायी है।

लोगों के मन में तरह-तरह के प्रश्न हैं। कुछ वर्ष पूर्व हमारी रैली हुई थी। कुछ लोगों ने कहा कि ठेंगड़ी जी आपकी ताकत क्या हैं? आप मल्टीनेशनल (बहुराष्ट्रीय कंपनियों) के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर रहे हैं। मल्टीनेशनल तो सरकार का कवच पहने हुए है। हमने कहा कि ऐसा है कि हम अपनी सरकार के विरोध में नहीं हैं, समर्थन में भी नहीं है। हम मल्टीनेशनल का विरोध करते हैं। लेकिन यदि मल्टीनेशनल को बचाने का काम सरकार करती है तो हमें सरकार का भी विरोध करना पड़ेगा। प्राचीन काल में ऐसा हुआ कि जनमेजय राजा ने सर्प यज्ञ किया। यज्ञ में एक-एक सर्प का नाम लेकर यज्ञकुण्ड में आहुति दी जानी लगी। उन्होंने ... स्वाहा' करके आहुति दी। बाकी ... गए, लेकिन तक्षक नहीं आया। उन्हें ... कि मैंने 'तक्षकाय स्वाहा' कहा लेकि... क्यों नहीं आया? उन्होंने जब दिव्य ... देखा तो पता चला कि इन्द्र ने अपने ... पीछे तक्षक को छिपा रखा था। ... इन्द्र से कहा कि आप तक्षक को ... इन्द्र ने कहा, नहीं मैं इसे नहीं छोड़... तो फिर बाध्य होकर उन्होंने कहा ... तक्षकाय स्वाहा'। जैसे ही ऐसा कहा ... पीछे हटे और तक्षक यज्ञकुण्ड में ... हमारा आज के सरकार से वैसे को... नहीं है। लेकिन यदि वे तक्षक को अ... छुपाते हैं तब हमको इस सरकार के ... भी कहना होगा कि 'इन्द्राय तक्षकाय ... (भारत माता की जय एवं कर तल... . अब गेंद उनके पाले में है। स... तय करना है कि हमें उनके खिलाफ ... लड़नी है या नहीं लड़नी। यदि वे ... कि हम उससे मिलकर चलें तो मल्टी... को सुरक्षा देने का गोरखधंधा आज ... सरकार को बंद करना चाहिए। वरना ... तक्षकाय स्वाहा' करना पड़ेगा।

सभी लोग जानते हैं आपने भी सु... कि लाखों मजदूर बेरोजगार हैं। सर... नीति के कारण आत्महत्या करने पर ... है। सैकड़ों किसानों ने आत्महत्या की ... प्रदेश का किसान आत्महत्या कर रहा है ... की तादाद में लघु उद्योग बंद हो गए ... तरह से लाखों लोग परेशान हैं। लोगों ... कि 'आपकी ताकत क्या हैं? लोग ... कुचल रहे हैं फिर भी आपने जवा... दिया।' आज हम यह कह सकते हैं कि ... ताकत बहुत बड़ी है और हमारी ताकत ... का काम स्वयं सरकार कर रही है। ... उद्योगों को मिटाने और मजदूरों को बे... करने का काम शुरु किया गया है। कि... को भी आयात शुल्क और सब्सिडी के ... आत्महत्या करने के लिए मजबूर किया ... रहा है। लघु उद्योग बंद हो रहे हैं। इससे ... समर्थन में बाकी लोग आकर खड़े हो ... – इसके लिए सरकार स्वयं काम कर ... है और अपने लिए शत्रु निर्माण करने में ... सरकार स्वयं लगी हुई है। इसी से यह ...

Scanned with OKEN Scanner

हो जाता है कि हमारी ताकत क्या है। हमारा कहना है कि सरकार की कृपा से हमारी ताकत दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। वे अपने शत्रुओं की संख्या बढ़ाते जा रहें हैं। यह बात ध्यान में रखना चाहिए। किंतु आखिर हम सब कब तक चुप बैठेंगे और इस दृष्टि से लोग पूछते हैं कि आप लोग क्या कर सकते है। इस विषय को हमें थोड़ा समझ लेना चाहिए। इतिहास में कई बार ऐसे प्रसंग आए हैं कि जनता और राष्ट्र को खाने के लिए तैयार खड़ी आसुरी शक्तियों का मुकाबला करने वाली साधन विहीन दैविक शक्तियाँ छोटी दिखाती है। एक ओर सर्वसाधन युक्त आसुरी शक्तियाँ खड़ी होती है और दूसरी ओर साधनहीन देशभक्त शक्तियाँ होती हैं। इस अवस्था को देखकर सबके मन में भय पैदा होता है – "रावण रथी विरथ रघुवीरा। देखि विभीषण भयहुँ अधीरा।" विभीषण देखा कि रावण के पास साधन है, और राम बेचारा जमीन पर खड़ा होकर लड़ रहा है। विभीषण के मन में भय पैदा हुआ। लेकिन आसुरी शक्ति का विजय हुआ क्या? सर्वसाधन सम्पन्न आसुरी शक्ति को परास्त करते हुए दैवी शक्तियाँ विजय हुई। यही बात शालिवाहन के समय हुआ। वे साधनहीन थे, फिर भी विजयी हुए। कैसे विजयी हुए? केवल साधन के आधार पर नहीं। यह जो कहा गया है कि विजय उपकरण के आधार पर नहीं, मानसिकता के आधार पर होती है। तीसरा प्रसंग तो अभी साढ़े तीन सौ साल पहले हुआ शिवाजी के समय हुआ। हिन्दुस्थान की सारी आसुरी शक्तियाँ एकत्रित थी। उनके पास विशाल खजाना था। बड़ी-बड़ी सेनाएँ थी और तय करके आए थे कि हमारा राज्य सारे हिन्दुस्थान पर होगा।

उसका विरोध करने के लिए खड़े हुए लोग साधन सम्पन्न नहीं थे और इस कारण आप कहें कि उनके खिलाफ आप कैसे खड़े हो सकते है? जैसा आज हम कह रहे हैं कि मजदूर आत्महत्या कर रहे हैं, किसान आत्महत्या कर रहे हैं, तो हम उसका विरोध करेंगे। लेकिन प्रश्न उठना स्वभाविक है कि इतने बड़े शत्रु का हम विरोध कैसे करेंगे? मरने के अलावा और क्या रास्ते हैं? आत्महत्या करने के अलावा और कोई चारा नहीं है। मैं कहता हूँ इसके बारे में थोड़ा सोचना चाहिए। इसमें भी रास्ता है। साधनों के आधार पर नहीं है, मानसिकता के आधार पर है, इच्छाशक्ति के आधार पर है। और आज यही मानसिकता हमारे लिए बहुत उपयोगी है। उन्होंने कहा कि हमारी ताकत के अनुसार तो हमें मरना पड़ेगा। हम मरने की तैयारी करें – "धर्मासाठी मरावे" (धर्म के लिए मरने की तैयारी करें)। किंतु मरने की तैयारी करें उस समय यह सोचना कि अरे बाप अब क्या होगा, यह नहीं चलेगा। तो उन्होंने कहा कि मरत-मरते उनको मारना चाहिए। अर्थात् मरते-मरते सबको मारना है – मारिता मारिता ध्यावे राज्य आपुण। और इस तरह सबको मारते-मारते अपना राज्य छीन कर लाना। ये रामदास स्वामी का कहना है। हम जानते हैं कि आज हम आत्महत्या कर रहें हैं लेकिन मरते-मरते मारने का काम करना है। हम जितने दुश्मन हैं सबको मारने का काम करेंगे, मरते-मरते भी अपना राज्य, अपना स्वत्व छीन कर ले आएंगे और हम यशस्वी होंगे। आज से साढ़े तीन सौ साल पहले इसी मानसिकता से वे लोग यशस्वी हुए थे। आज भी हम इसी मानसिकता से यशस्वी होंगे। इस मानसिकता का काम हम राष्ट्र जागरण से करेंगे। इस दृष्टि से हमें कहना चाहिए कि हम गरीब होंगे, लेकिन चूँकि हमारे इरादे नेक हैं हम ही यशस्वी होने वाले है। ये जो सारे राक्षस हैं, उनको हम खत्म करने वाले हैं। यह आत्मविश्वास हमारे अंदर होना चाहिए।

वास्तव में ये लोग जितना दिखते हैं उतने बलवान नहीं है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा। अमरीका नीचे आ रहा है। अलग-अलग लोग उसके दुश्मन बन रहे हैं। यूरोपीयन कम्युनिटी के किसान, मजदूर इनके खिलाफ हैं, दक्षिण-पूर्व एशिया की जनता इनके खिलाफ हैं, चाइना, जापान इनके खिलाफ हैं, खुद अमरीका का मजदूर आंदोलन उसके खिलाफ है और जो उपभोक्ता आंदोलन है वह भी इनके खिलाफ है। अमरीका में भी मानवतावादी लोग हैं उन्होंने अपना फोरम बनाया है। फोरम का नाम है – द एडल्ड इकोनॉमिक समिट (The Adult Economic Summit) जहाँ-जहाँ सरकार की मीटिंग होती है वहाँ यह समिट जाती है और सरकार के निर्णय के खिलाफ प्रस्ताव पास करती है। विरोध बढ़ रहा है और अमरीका नीचे जा रहा है।

स्वातंत्र्य प्राप्ति के पश्चात् जितनी सरकारें आयी, उनको ये धौंस देते रहे – 'हम जो कहते हैं वही करो, नहीं तो हम आर्थिक प्रतिबंध लगा देंगे।' वास्तव में उनकी धौंस में कोई ताकत नहीं है। लेकिन वे धौंस देते हैं, और अभी तक की सारी सरकारें इस धौंस के अंदर आकर उनके कहने के मुताबिक चली। हमें आशा थी कि आज की सरकार देशभक्त लोगों की है यह इनके धौंस के आगे झुकेगी नहीं। ये भी झुक रहे हैं जिस धौंस के सामने ये झुक रहें है वे क्या कर सकते हैं? अमरीका की कितनी ताकत है? आज वो धौंस दे रहे हैं हम आर्थिक प्रतिबंध लगाएँगे। भारत की जनता की ओर से मैं कहना चाहता हूँ कि आर्थिक प्रतिबंध हम लगाएँगे – धौंस आप किसको दे रहे हैं? वास्तव में आर्थिक प्रतिबंध के कारण ज्यादा से ज्यादा एक साल हमें कष्ट का सामना करना होगा। हमें पेटी कसना पड़ेगा। हमें पेटी कसने की आदत है। अगर एक साल तक हमने पेटी कस ली तो अमरीका को नीचे आना पड़ेगा। और इसका कारण है भारत को अमरीका की जितनी जरूरत है उससे अधिक अमरीका को भारत की जरूरत है (America needs India more than India needs America) और इस तरह से एक साल तक हम राह देखें तो अमरीका को झुकना पड़ेगा। अमरीका का सामान्य नागरिक एक साल तक कष्ट नहीं सह सकता है। जो अमरीका-वियतनाम के सामने झुक गया था। वह हर जगह झुक जाता है। क्यों झुक जाता हैं? अमरीका का नागरिक ज्यादा देर तक लड़ाई बर्दास्त नहीं कर सकता।

हमारे यहाँ सभी नागरिक कुछ न कुछ बचत करता है। थोड़ा-सा कमाया तो भी थोड़ा-सा पैसा बचाता है। अमरीका में आगे के तीन साल के क्रेडिट कार्ड को खत्म करके रखने वाले बहुत सारे लोग है। वे लोग एक साल तक राह नहीं देख सकते। हम भारत सरकार को कह दें कि अपनी इच्छा शक्ति को जाग्रत करो। जनता आपके पीछे रहेगी। इच्छा शक्ति के कारण भारत सरकार ने यदि उनके धौंस को नहीं माना तो एक साल में उनको नीचे आना पड़ेगा।

हमारे यहाँ एक लोककथा है। लोककथा

Scanned with OKEN Scanner

ऐसी है कि एक पति-पत्नी थे। पति हमेशा अपनी पत्नी को धौंस देता रहता था कि फलाने काम करो, नहीं तो मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा। अब बहुत काम ऐसे होते हैं जो पत्नी नहीं करना चाहती थी। लेकिन पति धौंस देता था कि मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा तो बेचारी बात मान लेती थी। यह बात उसने एक दिन अपनी एक सहेली से बताई। सहेलियों ने कहा कि वह केवल धौंस दिखाता है, धमकी देता है, चिंता मत करो। एक दिन जब तुम्हारा पति कहें कि मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा तो तुम कहना कि जाओ। तुम्हारा कौन सामना बाँधना है, कपड़े वैगरह बताओ – मैं बाँध देती हूँ। पत्नी ने पूछा कि ऐसा कहूँ पति से? सहेली ने कहा – हाँ। एक दिन पति जब आया। उसने पत्नी से कुछ काम करने को कहा और धौंस दिखाया कि यह कार्य तुरन्त होना चाहिए नहीं तो मैं घर छोड़कर चला जाऊँगा। पत्नी ने शांत भाव में कहा – आप जा सकते हैं। आपको जाते समय कौन-कौन कपड़े चाहिए, बताइए? मैं गठरी बाँध देती हूँ। यह उसके लिए अनपेक्षित था। उसने सोचा ही नहीं था कि पत्नी ऐसा कहेगी। कहा ठीक है ये कपड़े दो – वह कपड़े दो, मैं जाता हूँ। पत्नी ने गठरी बाँध दी। उसको चाय पिलायी एवं विदा कर दिया। पति जब घर के बाहर निकला तो उसका पैर आगे नहीं बढ़ रहा था। सांचता था, कहाँ जाऊँ? पहले से कुछ सोचा तो था नहीं। फिर सोचा कि थोड़ा आगे जाता हूँ पत्नी को पश्चाताप होगा तो बुला लेगी। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। गाँव न छोड़ना पड़े इसलिए उसने गाँव के बाहर के मंदिर पर जाकर बैठ गया। वह बैठकर सोंचने लगा, उसे खोजने उसकी पत्नी क्यों नहीं आ रहीं है? चौबीस घंटे बीत गए, फिर भी उसकी पत्नी नहीं आई – और २४ घंटे बीत गए फिर भी उसकी पत्नी आयी नहीं। उसका धीरज टूट गया। शाम को उसके घर की गाएँ और भैंस चारा खाकर उसी रास्ते से घर जा रही थी। चूँकि उसका धीरज टूट चुका था, वह अपनी भैंस की पूँछ पकड़कर घर जाने लगा और जाते समय मंत्र के सामान जपने लगा कि भैंसा मुझे जबर्दस्ती घर क्यो ले जा रहे हो, मैं घर जाना नहीं चाहता। ऐसा कहते-कहते वह अपने घर चला गया। मैं आपको बताता हूँ कि भारत सरकार ने थोड़ी इच्छा शक्ति दिखाई तो मिस्टर बुश को हम अपनी ताकत का अंदाजा करा सकते हैं। (आगंतुक श्रोताओं में गूँज उठा – भारत माता की जय)

आज हम सभी यह सोच रहे हैं कि डब्ल्यू.टी.ओ. क्या है? यह फ्रॉड – धोखेबाज, बईमान देशों का यह एक क्लब है। लोक हमें कहते है डब्ल्यू.टी.ओ. के बाहर मत आइए। अरे कौन है यह वर्ल्ड ट्रेड आगर्नाइजेशन? विकसित देशों ने, गोरे देशों ने गैर गौरे देशों पर अपना आर्थिक साम्राज्य बिछाने के लिए इस संगठन का निर्माण किया गया। महातिर मुहम्मद ने बहुत अच्छा सुझाव दिया था। उसने सुझाव दिया था कि विश्व व्यापार संगठन में जितने विकासशील देश हैं, उनको इकठ्ठा होकर अपना एक क्लब बनाना चाहिए। आज क्या होता है डब्ल्यू.टी.ओ. में, दादागिरी चलती है। ये गोरे देश गैर-गोरे देश पर दादागिरी चलाते हैं। विकासशील देशों के ब्लाक को यह बताना चाहिए कि हम गोरे देशों की दादागिरी नहीं चलने देंगे। यदि वे मानते नहीं तो हम डब्ल्यू.टी.ओ. छोड़ देंगे और अपना अलग संगठन खड़ा करेंगे। भारतीय मजदूर संघ का भी यह कहना है कि वे डब्ल्यू.टी.ओ. में दादागिरी छोड़ने वाले नहीं। इसलिए विकासशील देश एक क्लब बनाने के लिए तैयार रहे। यह हमारी जानकारी में है। यह कपोल कल्पना नहीं है। लेकिन उनको भारत जैसे किसी बड़े देश का नेतृत्व चाहिए। यदि यह नेतृत्व करने भारत आगे आता है तो सारे विकासशील देश उसके साथ आ जाएँगे। इस तरह का ब्लॉक बनाना चाहिए। इस तरह का ब्लॉक बनाते हुए अपने प्रयास पर भारत को एक और डब्ल्यू.टी.ओ. अर्थात् विकासशील देशों का एक नया प्रतिस्पर्धी विश्व व्यापार संगठन, खड़ा करना चाहिए। ताकि यह व्यापार संगठन उनको चुनौती दे। उनकी हालत अच्छी नहीं है। न अमरीका की हालत अच्छी है, न यूरोप की हालत अच्छी है। यदि हम हिम्मत के साथ खड़े हुए तो कोई कारण नहीं कि हम अपने हितों की रक्षा न कर सकें। इस संगठन को खड़ा करने में आर्थिक समस्या नहीं है, मानसिक समस्या है। यदि भारत सरकार मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार होकर दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ यह काम करती है तो हम सभी को दबा सकते हैं। इच्छा शक्ति नष्ट न हो। नष्ट होने का कारण क्या है? अरे १०० करोड़ लोग आपके पीछे हैं, इनकी इच्छा शक्ति आपके साथ है फिर भी यदि आप इच्छा शक्ति गँवा बैठे, खो बैठे तो क्या कारण हो सकता है? आज हम सरकार से प्रार्थना करेंगे कि अपनी इच्छा शक्ति जाग्रत करे और उनके खिलाफ खड़ी हो जाए। सरकार उनके खिलाफ खड़ी होती है तो हम सरकार का साथ देंगे। सरकार उसको प्रश्रय देती है तो हम सरकार का विरोध करेंगे। यह हमारी स्पष्ट नीति है। हम माँग करते हैं, दूसरा डब्ल्यू.टी.ओ. – प्रतिस्पर्धी विश्व व्यापार संगठन को सरकार खड़ा करे। सरकार नहीं खड़ा करती है तो हम लोग खड़ा करेंगे। इस दृष्टि से आज से केवल चार साल पहले भारतीय मजदूर संघ की रैली में बात की गई थी। तब मजदूर अकेला था, आज उसके कंधे से कंधा लगाकर किसान खड़े है, लघु उद्योग वाले खड़े हैं। बीमारी एक ही है कि सब लोगों को सरकार ने स्वयं अपना दुश्मन बना लिया है। वे सारे हमारे मंच पर आ सकते हैं। भारत की देशभक्त जनता विश्व बैंक, आई.एम.एफ. और विश्व व्यापार संगठन को ललकार कर कह सकती है कि लड़ाई के लिए तैयार हो जाओ। कमजोर इच्छा शक्ति होने के कारण आपने उनकी कई बातें मान ली तो अब भारत की जनता आपकी बातें नहीं मानेगी। हमें लड़ाई के लिए तैयार हो जाना चाहिए। इसलिए हम कहेंगे कि जन शक्ति जाग्रत हो। आज सर्वसाधारण लोगों को, किसानों को, नवयुवकों को, गरीबों को, व्यापारियों को एक मंच पर खड़ा हो जाने की जरूरत है। और राष्ट्रविरोधी, गरीब-विरोधी, मजदूर-विरोधी, किसान-विरोधी शक्तियों को हम ललकारें कि हम अब तैयार हैं – युद्धम् देहि। युद्ध के लिए तैयार हो जाओ – युद्धम् देहि। हमारा नारा यही होगा युद्धम् देहि। देखेंगे कि लड़ाई में क्या होता है।

कार का तर्क था कि नयी आर्थिक नीति के तहत हमारा भुगतान-संतुलन सुधर जाएगा। स वक्त भी विश्व बैंक से ऋण लेया गया, कहा गया कि डॉलर के मुकाबले रुपए में सुधार हो जाएगा। सरकार का दूसरा तर्क था कि मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने के साथ ही दुनिया में खाद्यान्न की कीमतें बढ़ेंगी और भारतीय किसान देश में खाद्यान्नों की कम कीमत के कारण निर्यात कर सकेंगे. . .

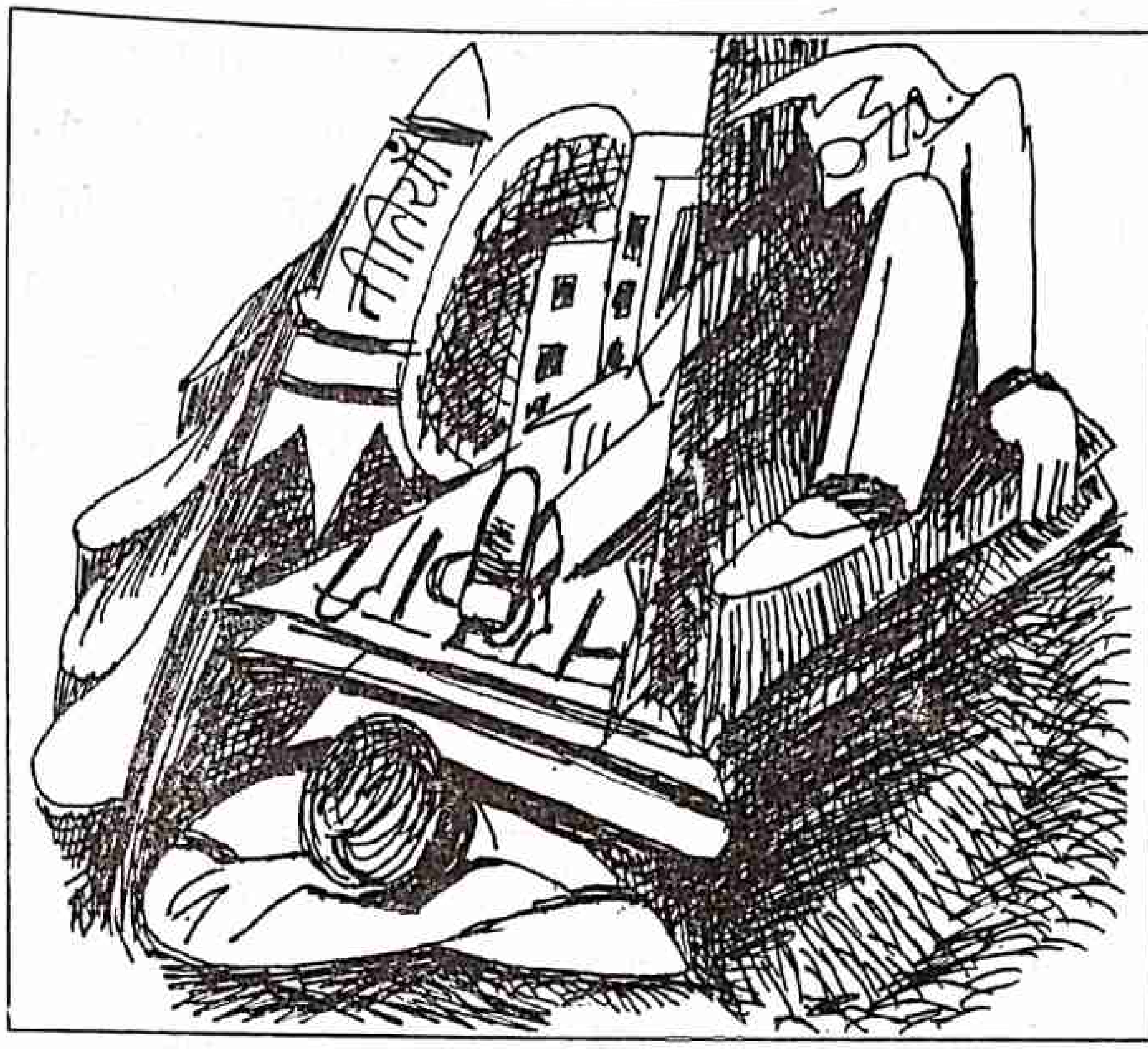

आयात-निर्यात नीति

सरकारी तर्कों से अलग है वास्तविकता

■ देवेन्द्र शर्मा

भारत पहले तो 'भूखा' देश कहा जाता था, मात्रात्मक प्रतिबंधों को खत्म कर देने के बाद अब उसके ...' होने की बारी है। १९९३-९४ में ...फ्रीका में मराकोश में विश्व व्यापार संगठन ... जन्म हुआ। तभी से भारत सरकार की ...लोचना की जा रही है। उस वक्त सरकार ...की ओर से मनमोहन सिंह और प्रणव ...खर्जी) कह रही थी कि उसकी ...तान-संतुलन की स्थिति ठीक नहीं है, ...सलिए मात्रात्मक प्रतिबंध को खत्म करने ... जरूरत नहीं है। सरकार का तर्क था कि ...ी आर्थिक नीति के तहत हमारा ...तान-संतुलन सुधर जाएगा। उस वक्त भी ...व बैंक से ऋण लिया गया, कहा गया कि ...लर के मुकाबले रुपए में सुधार हो जाएगा। ...कार का दूसरा तर्क था कि मात्रात्मक ...तिबंध हटाने के साथ ही दुनिया में खाद्यान्न ... कीमतें बढ़ेंगी और भारतीय किसान देश ...खाद्यान्नों की कम कीमत के कारण निर्यात कर सकेंगे, इस तरह हम विश्व बाजार पर कब्जा कर लेंगे। सरकार का तीसरा तर्क था – अमीर देशों में खाद्यान्न (गेहूँ-धान) पैदा नहीं होगा और अनाज पैदा करने का काम विकासशील (भारत सहित लगभग ८०) देशों का होगा। इससे हमारे किसानों को फायदा होगा, क्योंकि अनाज के भाव बढ़ जाएंगे। इसके विपरीत विकसित देश आलू, गन्ना, कपास और फल-फूल आदि पैदा करेंगे व खाद्य-प्रसंस्करण क्षेत्र में सक्रिय होंगे। सरकार का चौथा और अंतिम तर्क था कि दुनिया भर में कृषि पर सब्सिडी कम हो जाएगी और भारतीय किसान सस्ते दामों पर निर्यात करेंगे। इसकी वजह यह है कि निर्यात के लिए विदेशी बाजार उपलब्ध होंगे। मैंने चार साल पहले ही इन चारों तर्कों को गलत सिद्ध कर दिया था, क्योंकि उस वक्त भी समूची प्रक्रिया प्रतिकूल दिख रही थी।

सितम्बर, २००० में दिल्ली में सरकार के साथ किसान नेताओं और कई गैर सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों की बैठक हुई थी, जिसमें डब्ल्यू.टी.ओ. और उसके कृषि के ऊपर पड़ने वाले दुष्प्रभाव पर चर्चा हुई थी। उस बैठक में सरकार ने स्वीकार किया कि १९९४ की सरकार के चारों तर्क गलत साबित हुए। सवाल है कि जब इन चारों तर्कों पर कुछ भी नहीं किया गया तो सुधार के दूसरे चरण यानी मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने का काम क्यों शुरु किया गया? पहले तो पूर्व में व्यक्त प्रतिबद्धताएँ पूरी की जानी चाहिए थी। इसलिए हम कह सकते हैं कि मात्रात्मक प्रतिबंध हमारे लिए घाटे का सौदा साबित होना तय है।

विकसित देशों को १९९५ से आगामी छह साल के भीतर यानी २००१ तक २१ प्रतिशत सब्सिडी कम करनी थी, किंतु अमरीका ने अपने वायदे के मुताबिक सब्सिडी घटायी ही नहीं। इसके विपरीत उसने ग्रीन, अम्बर और ब्लू नाम से तीन बॉक्स बना डाले। इन तीनों के तहत वह किसानों की

Scanned with OKEN Scanner

सब्सिडी बचा सकता है। इसका व्यापार पर कोई बुरा असर भी नहीं होगा। अमरीका ने तो प्रत्यक्ष सब्सिडी तो जारी रखा ही, इंश्योरेंस भी देना बंद नहीं किया। यानी जिस जमीन को खेती के काम नहीं लाया जाएगा, उस पर भी अमरीका ने सब्सिडी दी है। पिछले दो वर्षो में अमरीका ने ९० हजार करोड़ रुपए की सब्सिडी सिर्फ किसानों को दी है। जॉर्ज डब्ल्यू. बुश ने चुनाव प्रचार के दौरान कहा था कि उनके शासन में अगले चार वर्षों में किसानों को और भी सब्सिडी दी जाएगी।

यह तथ्य भी गौरतलब है कि पश्चिम में सबसे धनी व्यापार-संपन्न देशों का एक संगठन है – ऑर्गेनाइजेशन फॉर इकोनॉमिक को-ऑपरेशन एण्ड डेवलेपमेंट। इसमें यूरोप के देश शामिल हैं। इन देशों ने १९९८ तक कृषि पर १० प्रतिशत सब्सिडी बढ़ा रखी है। १९९९ में इनका कृषि पर १६ लाख २० हजार करोड़ रुपए सब्सिडी रहा। मजे की बात यह है कि भारत का साल भर का समूचा कृषि पैदावार मिलाकर भी उक्त सब्सिडी छह गुना ज्यादा बैठती है। जब मराकेश में विश्व व्यापार संगठन के समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे, तब यूरोप और अमरीका के बीच एक 'पीस क्लाज' हुआ था। इसमें यूरोपीय संघ को २००३ तक सब्सिडी को सुरक्षित रखने का प्रावधान है। पिछले साल डेनमार्क से भारत में दूध आया, जिसमें वहाँ की सरकार ने सब्सिडी दी थी, लेकिन इस मसले पर भारत-डेनमार्क को चुनौती नहीं दे सकता, क्योंकि २००३ तक उसे 'पीस क्लास' के तहत सुरक्षा मिली हुई है। इसके विपरीत भारत से कहा गया था कि वह १ अप्रैल २००१ तक मात्रात्मक प्रतिबंध बिल्कुल खत्म कर दे और हम विश्व व्यापार संगठन की शर्तों को आंख मूंद कर मान भी लिए ऐसा करके हम खुद कंगाल होने के लिए तैयार हो गए। अब भारत में सस्ता अनाज आना शुरु होगा। इसीलिए तो अमरीका ने लड़कर दो साल के भीतर मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने के लिए कहा था, क्योंकि अमरीका के किसान तो पहले से ही सब्सिडी के जरिए सुरक्षित कर दिए गए थे।

> **भा**रत के किसान निहत्थे हो चुके हैं। अब आने वाले दि... में खाद्यान्न, खाद्य तेल, फलों, फ़ूलों आदि का आय... बढ़ने जा रहा है और हम न चाहकर भी अपने उपभो... का ३ प्रतिशत आयात करने के लिए मजबूर कर दि... गए हैं। इस तरह धीरे-धीरे भारत के लघु और सीमां... किसान खेती के कामकाज से बाहर हो जाएंगे।

भारत के किसान निहत्थे हो चुके हैं। अब आने वाले दिनों में खाद्यान्न, खाद्य तेल, फलों, फूलों आदि का आयात बढ़ने जा रहा है और हम न चाहकर भी अपने उपभोग का ३ प्रतिशत आयात करने के लिए मजबूर कर दिए गए हैं। इस तरह धीरे-धीरे भारत के लघु और सीमांत किसान खेती के कामकाज से बाहर हो जाएंगे। भारत ७५० लाख टन गेहूँ पैदा करता है, जबकि हमारे उपभोग की मात्रा इससे कहीं ज्यादा है। इसका ३ प्रतिशत यानी २ मिलियन टन आयात करना ही होगा। यही हाल अन्य खाद्यान्नों का भी होगा। आयातित अनाज सस्ते दामों पर ही उपलब्ध हर क्षेत्र पर से सब्सिडी हटा दी है, इसलिए अब छोटा किसान मारा जाएगा। ऐसे में वह वहाँ जाएगा, क्योंकि उसके पास विकल्प नहीं हैं, न ही प्रत्यक्ष सब्सिडी है। वह खेती छोड़कर शहर की ओर भागेगा, गांव में रह गया तो आत्महत्या करने को मजबूर होगा। आंकड़े बताते हैं कि १९९८ से अब तक करीब १० हजार भारतीय किसानों ने आत्महत्याएँ की हैं। शहर की ओर पलायन के बारे में आकलन है कि २०१० तक भारतीय शहरों में पलायन कर चुके लोगों की संख्या ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी की कुल आबादी से दोगुनी हो... यह आकलन डब्ल्यू.टी.ओ. से पहले... जबकि मेरा मानना है कि यह पलाय... गुना ज्यादा होगा। परिणाम यह भी ह... देश में एक ओर भरपूर अनाज रहेगा, ... खरीदने वालों की क्रय-शक्ति घ... होगी। इसे हम 'पैराडॉक्सेज ऑफ... (अनाज तो पर्याप्त रहेगा लेकिन ... होगी कि भूख से मरने वालों की सं... बढ़ती जाएगी) कह सकते हैं। अ... हालात भी कम बुरे नहीं हैं – भारत ... ५०० लाख टन सरप्लस अनाज है, ... लगभग २५ करोड़ भारतीयों को दो ... रोटी मयस्सर नहीं है। आँध्र प्र... कम्प्यूटर क्रांति का राज्य कहा जाता ... वहीं के अनंतपुर जिले में सन् २००० ... में लगभग ९०० लोग भूख के कारण ... हैं। सरकारी आँकड़े के अनुसार राज... पिछले साल खाना-पानी न मिलने ... लोगों की मृत्यु हो चुकी है। कमो... स्थिति समूचे देश की है। मात्रात्मक ... खत्म कर दिए जाने के कारण अब ... हिसाब से भारतीय नागरिक मरें... सरकार सोचती है कि मंत्रियों या स... समूह बना देने से समस्याएँ ख... जबकि यह मजाक जैसा लगता है...

> *".....राजनीतिक शक्ति का प्रजा में विकेंद्रीकरण करके जिस प्रकार शासन की... का निर्माण किया जाता है, उसी प्रकार आर्थिक शक्ति का भी प्रजा में विकें... करके अर्थव्यवस्था का निर्माण एवं संचालन होना चाहिए। राजनीतिक प्रजा... व्यक्ति की अपनी रचनात्मक क्षमता को व्यक्त होने का पूरा अवसर मिलता है... उसी प्रकार आर्थिक प्रजातंत्र में भी व्यक्ति की क्षमता को कुचलकर रख... नहीं; अपितु उसको व्यक्त होने का पूरा अवसर प्रत्येक अवस्था में मिलना चा...*
>
> – पं. दीनदयाल उ...

यह नहीं भूलना चाहिए कि अभी मारे कुल निर्यात में ४०% योगदान घु उद्योगों का है। अब आयात पर प्रतिबंध हटने के बाद लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित सभी ८०० दों पर खतरा मंडराने लगा है। क्या मारे लघु उद्योग बड़ी कंपनियों के ायातित मालों से अपने ही देश में प्रतिस्पर्धा कर पाएंगे?

अवधेश कुमार

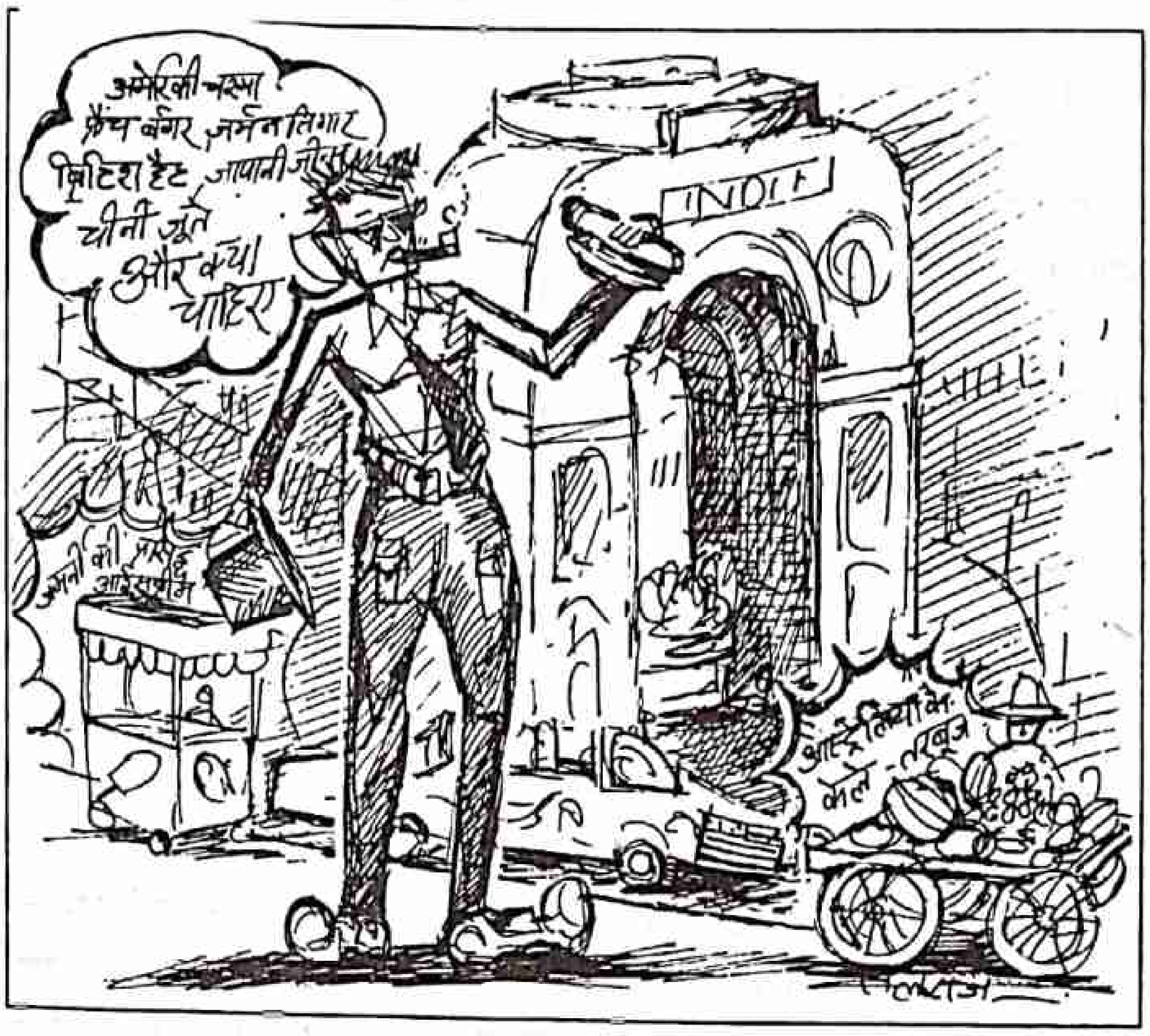

ुक्त बाजार बनने में जहाँ चूक हुई...

भारत को सन् १९४७ में राजनीतिक आजादी अवश्य प्राप्त हुई, पर विश्व भर में उत्पादित, निर्मित या ्सी भी तरह उपलब्ध सामग्रियों के निर्बाध ाभोग की लालसा रखने वालों को वास्तविक ज़ादी अब मिली है। अपनी इस उपभोग लसा की तृप्ति का पूर्ण अवसर पाने के लिए े लोगों को साढ़े पाँच दशक से अधिक वधि तक उस क्षण की प्रतीक्षा करनी पड़ी । वाजपेयी सरकार में वाणिज्य मंत्री श्री सोली मारन ने सन २००१-०२ की शोधित आयात-निर्यात नीति (एक्जिम लिसी) में विदेशी वस्तुओं के आयात पर ी मात्रात्मक प्रतिबंधों की अंतिम दीवार को स्त कर देने की घोषणा कर दी। अत: ये ग यदि सरकार के इस निर्णय पर आह्लादित उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे हैं तो इसमें ाश्चर्य की कोई बात नहीं है। वास्तव में स्व० कपूर ने अपने इस फिल्मी गाने – *"मेरा ता है जापानी और पतलून इंग्लिशतानी, सर लाल टोपी रूसी फिर भी दिल है न्दुस्तानी"* में भले ही व्यंग्यात्मक बाण छोड़े , पर इसका जो सीधा अर्थ है, उसे पूर्ण ावहारिकता का जामा जब पहनाया गया है। योंकि ऐसे लोगों का दिल वास्तव में न्दुस्तानी ही रह जाएगा या ये विश्वभर के पभोक्ता सामग्रियों का भोग करके भी "दिल है हिन्दुस्तानी" कह सकेंगे। इसमें संदेह की काफी गुंजाइश है।

वैसे मात्रात्मक प्रतिबंधों (क्वाण्टिटेटिव रिस्ट्रिक्शन्स) के संबंध में पिछले कम-से-कम दो वर्षों से बहुत कुछ कहा जा चुका है। श्री मारन को अकेले संशोधित आयात-निर्यात द्वारा आयात पर लगे प्रतिबंधों की दीवार को धाराशायी कर देने का श्रेय नहीं दिया जा सकता, इस काम में कई लोगों की मेहनत और समय लगे हैं। इसकी प्रक्रिया तो सन १९९१ से ही आरंभ हो गई थी और सन १९९६ से सन २००० के चार वर्षों में साढ़े नौ हजार से ज्यादा विदेशी वस्तुओं के लिए भारत की सीमाएँ खोल दी गईं। हाँ, इस आयात-निर्यात नीति द्वारा ७१५ महत्वपूर्ण वस्तुओं की अंतिम श्रेणी को प्रतिबंधों से अवश्य मुक्त किया गया है। इसके बाद भारत यह कहने की सक्षम स्थिति में है कि विश्व व्यापार संगठन की मान्यता के अनुरूप वह मुक्त व्यापार वाला देश (फ्री ट्रेड नेशन) बन चुका है।

निस्संदेह, विश्व व्यापार संगठन का सदस्य होने एवं उसकी शर्तों से बँधे होने के कारण विश्व व्यापार व्यवस्था के साथ भारतीय व्यापार व्यवस्था को समन्वित करना भारत सरकार की विवशता है। इसलिए सरकार की दृष्टि में मुक्त आयात की व्यवस्था आवश्यक थी। इसलिए सरकार की दृष्टि में मुक्त आयात की व्यवस्था आवश्यक थी। कहने वाले यह भी कहते हैं कि वर्त्तमान दौर में कोई भी देश विश्व भर में व्याप्त अंतर्धारा से अपने को अलग-अलग रख कर अपना दूरगामी हित साधन नहीं कर सकता। लेकिन क्या आयात-निर्यात में घोषित व्यवस्थाएँ अंतिम रूप से देश के हित में हैं? इस संबंध में तत्काल दो प्रकार के मत हैं। सरकार एवं मुक्त अर्थव्यवस्था के समर्थकों की बातें मानें तो इस प्रश्न का उत्तर हाँ में है। पर इससे अलग कई ठोस आशंकाए भी उठायी जा रही हैं। इनका स्पष्ट मानना है कि विदेशी वस्तुओं के भारी प्रवाह के नीचे भारतीय उत्पाद दब जाएंगे एवं इनकी मार से तबाह होकर भारत के अनेक उद्योगों की मौत हो जाएगी। ठीक ऐसी ही भयानक तस्वीर कृषि के संबंध में भी खींची जा रही हैं।

ये आशंकाएं एकदम निर्मूल हों, ऐसा नहीं है। पर, यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक

Scanned with OKEN Scanner

है कि आयात के संबंध में ठोस तथ्य अभी प्रामाणिक रूप में उपलब्ध नहीं हैं। किन-किन आयातित विदेशी वस्तुओं के मूल्यों, उनकी गुणवत्ता, उनकी मात्रात्मक उपलब्धता, उनकी ग्राह्यता आदि के कारण कौन-कौन से क्षेत्र प्रभावित या दुष्प्रभावित हो रहे हैं – इन सबकी गहन छानबीन के बाद ही निश्चित निष्कर्ष निकाला जा सकता है। तात्कालिक तथ्य तो यह है कि पिछले चार वर्षों में साढ़े नौ हजार से ज्यादा वस्तुओं से आयात प्रतिबंध हटाए जाने के बावजूद आयातित वस्तुओं की कोई बाढ़ भारत में नहीं देखी गई। यहाँ तक कि गत वर्ष संवेदनशील वस्तुओं की कोटि में से भी ७१४ वस्तुओं पर से प्रतिबंध हटाने के बावजूद गैर तेल आयात में लगभग आठ प्रतिशत की गिरावट ही दर्ज की गई। जाहिर है ये तथ्य अभी इन आशंकाओं को सही साबित नहीं करेंगे। इसके अलावा मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त करने का यह अर्थ कतई नहीं है कि उन पर किसी प्रकार की अन्य बंदिशें नहीं हैं। सच कहा जाए तो सरकार ने भावी आशंकाओं के निवारण के लिए सीमा शुल्क सहित कठोर नियमों के सुरक्षोपाय (सेफगार्ड्स) वाले दीवार भी खड़े किए हैं। उदाहरण के लिए मोटर वाहन क्षेत्र को ही लीजिए। ऐसी आशंकाएं उठायी जा रहीं थीं कि उपयोग की गई पुरानी विदेशी कारों के आयात से देशी कार उद्योग तबाह हो जाएगा। आयात-निर्यात नीति में स्पष्ट किया गया है कि आप पुरानी कारें ला तो सकते हैं पर वह तीन वर्ष से ज्यादा पुरानी नहीं होनी चाहिए। यही नहीं, उस पर सीमा शुल्क सहित १८० प्रतिशत अन्य शुल्क लगा दिए गए हैं। इसके साथ कुछ और कठोर शर्तें भी नत्थी हैं – (१) इन कारों की कम से कम पाँच वर्षों की जीवनावधि की गारंटी होगी; (२) बाएं हाथ की ओर से डाईविंग वाली कार नहीं बेची जा सकती; (३) इनकी बिक्री के बाद सर्विस एवं कलपुर्जों की आपूर्त्ति सुनिश्चित करनी होगी; (४) इन्हें केंद्रीय मोटर वाहन अधिनियम १९८८ का पालन करने वाला होना चाहिए; (५) इन्हें केवल मुंबई के न्हावाशेवा कस्टम बंदरगाह पर ही उतारा जा सकेगा आदि। लगभग ऐसी ही शर्तें नयी कारें, ट्रकों, लौरियों आदि के लिए भी हैं। अंतर इतना ही है कि उन पर सीमाशुल्क कम हैं एवं उन्हें न्हावाशेवा के अलावा कलकत्ता एवं मद्रास बंदरगाह पर भी उतारा जा सकेगा। अब यह स्वयं सोचने वाली बात है कि इतने कठोर शर्तों के बाद क्या भारतीय बाजार में विदेशी मोटर वाहनों की बाढ़ आ सकती है?

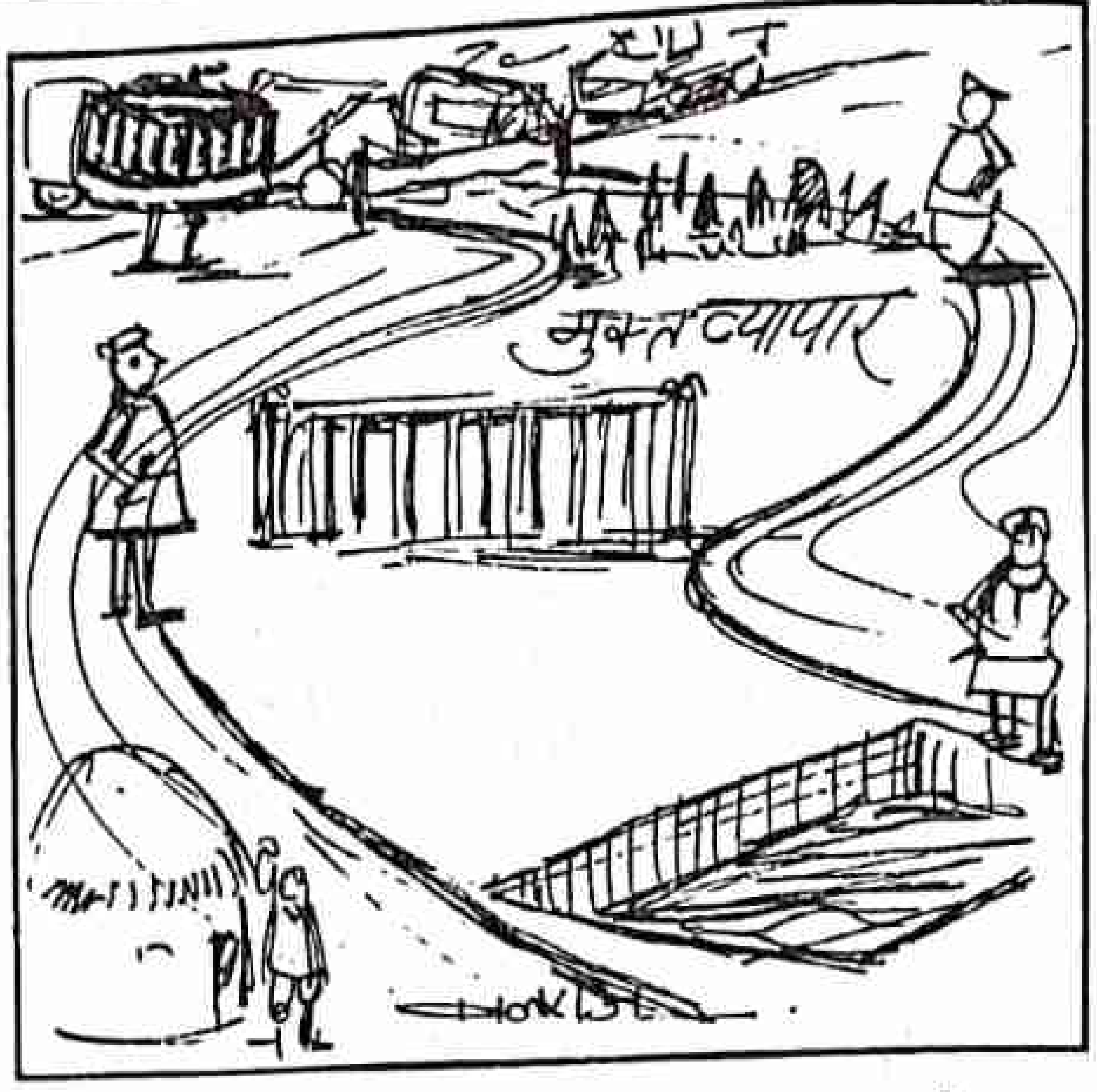

आयात में बाधक बना आयात शुल्क

१६ अप्रैल २००१ रात्रि १०.३० के अपने प्रसारण घटना चक्र में बी.बी.सी. ने बताया कि इन दिनों इंग्लैंड की ह्विस्की शराब बेचने वाली एक कंपनी भारत के खिलाफ विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू.टी.ओ.) के न्यायालय में अभियोग लगाने पहुँची है। कंपनी का कहना है कि 'भारत डब्ल्यू.टी.ओ. का सदस्य देश है, उसने विदेशी शराब बेंचने के लिए नियमानुसार खूली छूट दे रखी है। फिर उसने ७०० प्रतिशत आयात शुल्क लगाकर विदेशी शराब के आयात में बाधा क्यों खड़ा किया है? यह कदम उसने अपने यहाँ की शराब के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए किया है। भारत सरकार का यह कदम सचमुच रक्षात्मक है। हाँ, यदि ऐसा ही प्रयास कृषि और लघु उद्योगों व कुटीर उद्योगों के क्षेत्र में दिखाई पड़ता है तो इस प्रयास की प्रशंसा की जा सकती है।

तमाम औद्योगीकरण के कृषि अभी भी भारतीय अर्थ रीढ़ है। भारत में कृषि एवं ग्रा जुड़े लोगों की दुर्दशा को देख क्षेत्र के वस्तुओं के आयात एकबारगी सिहरन पैदा होती है स्वाभाविक ही उभरता है विदेशी कृषि उत्पाद भारतीय हावी हो गए तो भारतीय कृषि स्वयं भारत की ही क्या दशा ७१५ वस्तुओं पर से मात्रात्म हटाए गए हैं – उनमें १४७ कृषि इनमें चावल, गेहूँ सहित अन्य अन फल, माँस, चाय, कॉफी, बच्चों के डेयरी उत्पाद, आदि आवश्यक शामिल है। स्पष्ट है कि सस्ते कृ का आयात भारतीय किसानों को बुरी तरह प्रभावित कर सकता है। देशों में कृषि को भारी मात्रा में स है। इसलिए यह भय एकदम नि है। यह देखना होगा कि भार उत्पाद स्वयं भारत में एवं भार इनका मुकाबला कर पाते हैं

निश्चित रूप से इन्हीं आ मद्देनजर सरकार ने कृषि उत्पा व्यापार क्षेत्र बनाते हुए स्वयं इसकी वास्तविक परिणातियों सशंकित है। सरकार की मन:स्थिति का इससे बड़ा प्रमा हो सकता है कि आयात-निर्या घोषणा करते समय स्वयं वाणि ऐसी शब्दावलियों का प्रयोग कि प्रयोग सामान्यतः युद्ध के सम जाता है। सार्वजनिक महत्व व ३०० वस्तुओं के आयात पर के लिए सचिव विशेषज्ञों के समूह का गठन किया गया, ही 'वार रूम' यानी 'युद्ध कक्ष शब्द थे, 'यह अनुचित व्यापार प्रवाह के विरुद्ध एक युद्ध होगा' बी अ वार एगेंस्ट इम्पोर्ट सर्ज ट्रेड)। आगे उनका कहना था कि १०,२०० वस्तुएं अभी मात्रात्म की परिधि से मुक्त हैं उनके आ

आँकड़ों को तीव्र गति से इकट्ठा करने के लिए एक आरंभिक चेतावनी प्रणाली (अर्ली वार्निंग सिस्टम) का गठन किया जा रहा है। उनके अनुसार यह इस बात को सुनिश्चित करेगा कि स्थिति हमेशा हमारे नियंत्रण में रहे। इसके बाद यह बताने की आवश्यक नहीं है कि स्वयं सरकार के भीतर इस हालात को लेकर क्या चल रहा है लेकिन प्रश्न है कि इस निश्चित स्थिति के लिए वर्तमान या पूर्व सरकारों ने ठोस पूर्वोपाय क्यों नहीं किए?

बेशक, सरकार ने तात्कालिक रूप से बहुत कुछ किया है। इस बात पर विश्वास किया जा सकता है कि युद्ध कक्ष की मासिक रपट के आधार पर सरकार आगे भी भारतीय उत्पादों की सुरक्षा के कदम उठाती रहेगी। पेट्रोल, डीजल, वायुयान ईंधन, यूरिया एवं विभिन्न खाद्यान्नों आदि के आयात के लिए परमिट की अनिवार्यता से इन पर नियंत्रण भी रहेगा। पर यह नहीं भूलना चाहिए कि सरकार ने ऐसे जो भी कदम उठाए हैं वे सब विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के तहत ही हैं। विश्व व्यापार संगठन के प्रावधान सभी सदस्य देशों को संवेदनशील वस्तुओं के आयात को नियंत्रित करने के लिए ऐसी अनुमति देता है। इनमें आयात शुल्क से लेकर, डम्पिंग विरोधी शुल्क, जानवर एवं वनस्पति संरक्षण नीतियाँ, मानव स्वास्थ्य एवं सुरक्षा नियम, गुणवत्ता मानक सहित अनेक सुरक्षोपाय संबंधी प्रावधान शामिल हैं। विश्व के प्रत्येक देश अपने यहाँ ये कदम उठाते हैं। थोड़े शब्दों में कहें तो सरकार ने अपनी ओर से मौलिक कुछ नहीं किया है। इसका कोई अगर एक प्रमुख कारण नजर आता है तो वह है – अर्थ एवं वाणिज्य व्यवस्था संबंधी मौलिक दृष्टि का अभाव।

यह बात ठीक है कि हम अगर अपनी वस्तुओं के लिए निर्यात बाजार चाहते हैं तो हम अपनी सीमाओं को बंद नहीं रख सकते। श्री मारन ने स्वयं कहा है कि अगले चार वर्ष में भारत का निर्यात व्यापार विश्व के कुल निर्यात के एक प्रतिशत तक ले आना है। अभी हमारा निर्यात अनुपात मात्र ०.७ प्रतिशत है। इसका अर्थ है कि अगले तीन वर्षों तक भारत का निर्यात व्यापार ७५ अरब डॉलर होना चाहिए। निश्चय ही यह एक उत्साहजनक लक्ष्य है एवं सरकार का इस दिशा में प्रयास सराहनीय माना जाएगा। किंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि अभी हमारे कुल निर्यात में ४०% योगदान लघु उद्योगों का है। अब आयात पर से प्रतिबंध हटने के बाद लघु उद्योग क्षेत्र के लिए आरक्षित सभी ८०० मदों पर खतरा मंडराने लगा है। क्या हमारे लघु उद्योग बड़ी कंपनियों के आयातित मालों से अपने ही देश में प्रतिस्पर्धा कर पाएंगे? सच कहा जाए तो इस व्यवस्था में अब आरक्षण ही बेमानी है। पर आरक्षण से बाहर होने के बाद लघु उद्योगों का भविष्य क्या होगा – यह मूल प्रश्न अभी तक अनुत्तरित हैं।

वास्तव में एक सीधा रास्ता सरकार के

पहले से ही सरकार लगातार यह आह्वान कर सकती थी कि विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के अनुरूप उसे भारतीय बाजार को प्रतिबंधों से मुक्त करना होगा इसलिए देशवासी स्वयं को इस बात के लिए तैयार करें कि वे बाजार में अधिक से अधिक देशी वस्तुओं की ही खरीददारी करेंगे। इसे यदि देशभक्ति एवं देश के आर्थिक स्वाभिमान का विषय बनाया जाता तो कोई कारण नहीं कि देश में इसके अनुकूल माहौल नहीं बनता।

समक्ष देश में जागृति लाने का था पहले से ही सरकार लगातार यह आह्वान कर सकती थी कि विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के अनुरूप उसे भारतीय बाजार को प्रतिबंधों से मुक्त करना होगा इसलिए देशवासी स्वयं को इस बात के लिए तैयार करें कि वे बाजार में अधिक से अधिक देशी वस्तुओं की ही खरीददारी करेंगे। इसे यदि देशभक्ति एवं देश के आर्थिक स्वाभिमान का विषय बनाया जाता तो कोई कारण नहीं कि देश में इसके अनुकूल माहौल नहीं बनता। इसी तरह देसी उत्पादकों व निर्माताओं को भी गुणवत्ता एवं मूल्य के स्तर पर स्वयं को प्रतिस्पर्धात्मक बनाने के लिए विवश किया जाता एवं उन्हें भी भारत के आम उपभोक्ता के साथ भावात्मक संबंध स्थापित करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए था। कहना न होगा कि यदि ऐसा किया गया होता तो आज हम दूसरी स्थिति में होते। चीन का उदाहरण हमारे सामने है। साम्यवादी सत्ता होते हुए भी उसने अर्थव्यवस्था को राष्ट्रीय मुद्दा बनाया एवं आज बाजार प्रतिस्पर्धा में उसकी स्थिति से पूरा विश्व परिचित है। आश्चर्य की बात तो यह है कि वाणिज्य मंत्री युद्ध कक्ष की घोषणा तो करते है पर प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति देश को संबोधित करने की दिशा में सोंचते तक नहीं। यही कारण है कि भारत के आम आदमी का सरकार के कदमों से रागात्मक संबंध स्थापित नहीं हो पा रहा। और इसकी परिणति है देश में बढ़ती आशंकाएं एवं निराशा।

आयात-निर्यात नीति में कृषि निर्यात पर व्यापक बल दिया गया है। वाणिज्य मंत्री ने कहा भी है कि व्यापार की दिशा जो अभी तक उद्योग की ओर मुड़ी थी, अब उसका झुकाव कृषि की ओर किया जाएगा। इसके लिए "कृषि आर्थिक क्षेत्र (एग्री इकोनॉमिक जोन)" जैसी योजनाएँ भी हैं। परंतु देश के किसानों को विश्वास ही नहीं कि वे भी निर्यातक बन सकेंगे। ऐसे आत्मविश्वासहीनता के वायुमंडल में क्या आयात-प्रवाह से सफलतापूर्वक निपटना संभव होगा? वास्तव में विदेशी वस्तुओं की भोग लालसा वाले मुट्ठीभर लोगों को उपभोग की आजादी अवश्य मिल गई है, भारत बाजार की दृष्टि से भूमंडलीय गाँव (ग्लोबल विलेज) भले कहला जाए, भारत तथाकथित मुक्त व्यापार वाले देशों की कतार में भले शामिल हो गया हो, देश में जो आशंका का माहौल है उसमें हमारे लिए सफलतापूर्वक हालात से निपटना कठिन है। इसमें दोष उन उद्योगपतियों का भी कम नहीं है जो केवल सरकारी मदद एवं संरक्षण में जीने के आदी रहे हैं एवं जिन्होंने अपने उत्पाद को गुणवत्ता एवं मूल्य के स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक बनाया ही नहीं। उपभोक्ताओं की जेब काटने वाले एवं देश का संसाधन चूसने वाले ऐसे उद्योग यदि मरते हैं तो किसी को भी अफसोस नहीं होना चाहिए। लेकिन निरपराध, निर्दोष बलि न चढ़े, यह देखना सरकार का दायित्व है। ■

Scanned with OKEN Scanner

यह इस देश के इतिहास का दुर्भाग्य है कि जब-जब भी इसकी मूल संरचना के साथ छेड़-छाड़ किया गया तो उसे 'सुधार' का नाम दिया गया। कार्नवालिस ने जिलों में कलक्टर व्यवस्था सख्त की तो उसे राजस्व व्यवस्था में सुधार कहा गया जबकि इसका हेतु भारतीय ग्राम्य संरचना और राजस्व व्यवस्था को तोड़कर अपनी व्यवस्था थोपना था।

■ संजय तिवारी

नयी आयात-निर्यात नीति : छल और विपत्ति

उपनिवेशकाल के दौरान मद्रास बोर्ड ऑफ रेवन्यू के अध्यक्ष रहे जान सुलीवान ने एक बार कहा था – ''हमारी प्रणाली एक ऐसे स्पन्ज के रूप में काम करती है जो गंगा के किनारे से प्रत्येक अच्छी वस्तु ले लेती है और टेम्स के किनारे निचोड़ देती है।'' उपनिवेशवादी व्यवस्था बीते ५० साल से भी अधिक हो गए हैं, लेकिन काम अभी भी उसी रीति से चल रहा है। हथियार भर बदल गए हैं। राजनीतिक अस्त्रों की जगह आर्थिक शस्त्रों ने ले ली है। आज भी वह 'स्पन्ज व्यवस्था' लगातार गंगा के प्राण सोख रहा है।

यह इस देश के इतिहास का दुर्भाग्य है कि जब-जब भी इसकी मूल संरचना के साथ छेड़-छाड़ किया गया तो उसे 'सुधार' का नाम दिया गया। कार्नवालिस ने जिलों में कलक्टर व्यवस्था सख्त की तो उसे राजस्व व्यवस्था में सुधार कहा गया जबकि इसका हेतु भारतीय ग्राम्य संरचना और राजस्व व्यवस्था को तोड़ना था। विलियम बैंटिक ने मैकाले के द्वारा यह घोषित करवाया कि ''क्या हमें यह मिथ्या धर्म से संबंधित इतिहास, गणित ज्योतिष और आयुर्वेद पढ़ाना है, जिनमें न तो कोई साहित्य है न ही विज्ञान।'' (२ फरवरी १८३५ को जारी स्मरण पत्र)। तो उसे आज हम शैक्षणिक सुधार के रूप में देखते हैं। इसी तरह पिछले छह सालों से निरंतर भारतीय अर्थव्यवस्था की मूल और मौलिक संरचना के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है और हमें बताया जा रहा है कि यह आर्थिक सुधार है। यह 'आर्थिक सुधार' किसके लिए किए जा रहे हैं और जिसके लिए किए जा रहे हैं, उसकी भारत में क्या भूमिका है, क्या स्थिति है, इस पर कोई विचार नहीं। हाल में ही घोषित नयी आयात-निर्यात नीति २००१ दूसरे चरण के आर्थिक सुधार का महत्वपूर्ण कदम है।

इस नयी नीति के तहत सरकार ने सुरक्षा, संचार, जीवित पशुओं, दवाईयों, रसायनों की ६०० महत्वपूर्ण वस्तुओं को छोड़कर सृष्टि में उपलब्ध किसी भी वस्तु के लिए अपने दरवाजे खोल दिए हैं। उसमें सूअर का मांस, मुर्गे की टांग, पुरानी गाड़ी, पुरानी टीवी, चटनी, अचार जैसी विविध प्रकार की १४२९ वस्तुएँ हैं। जिनमें से ७१४ वस्तुओं से सरकार ने पिछले वर्ष ३१ मार्च को मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त कर दिए थे शेष ७१५ वस्तुओं से इस वर्ष ३१ मार्च को मात्रात्मक प्रतिबंध हटा लिए गए। इसके प्रभावों पर चर्चा करने के पहले उचित होगा कि मात्रात्म[क] प्रतिबंधों के बारे में थोड़ा जान लें और भार[त] को ऐसा क्यों करना पड़ रहा है, इसको सम[झ] लें।

विश्व अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने [के] लिए गैट के स्थान पर जिस विश्व व्याप[ार] संगठन की स्थापना की गयी उसमें शामि[ल] १३६ देशों ने इसकी स्थापना के साथ ही त[य] किया कि विश्व व्यापार को बढ़ाने के लि[ए] यह जरूरी है कि हर देश अपने-अपने दे[श] की आयात नीति को सरल बनाएँ। इस [...] कुछ देश पहले से सहमत थे, कुछ सहम[त] हो गए और कुछ को जबरन सहमत करवा[या] गया। तय किया गया कि जिन देशों [का] भुगतान संतुलन (बैलेंस ऑफ पेमेंट) ठी[क] नहीं है उनको यह सुविधा होगी कि वे अप[नी] आवश्यकता और आर्थिक स्थिति के हिसा[ब] से मात्रात्मक प्रतिबंध जारी रख सकते हैं[।] सहमति पत्र पर हस्ताक्षर के थोड़े दिनों बा[द] ही भारत ने विश्व व्यापार संगठन में घोषण[ा] कर दी कि उसका भुगतान संतुलन ठीक है

लेकिन भारत मात्रात्मक प्रतिबंध चरणबद्ध तरीके से ३१ मार्च २००३ तक समाप्त करना चाहता था। इस पर अमरीका ने ऐतराज व्यक्त किया। उसने विश्व व्यापार संगठन में भारत के खिलाफ विवाद याचिका दायर की। विश्व व्यापार संगठन ने नवंबर १९९७ में विवाद निपटान पैनल बैठाया, जिसमें फैसला भारत के खिलाफ हुआ। भारत ने इस फैसले के खिलाफ पुनर्विचार याचिका दायर की लेकिन उसकी याचिका निरस्त हो गयी। फलत: भारत और अमरीका के बीच एक समझौता हुआ जिसके तहत भारत को ३१ मार्च, २००१ तक दो चरणों में १४२९ वस्तुओं के आयात पर सभी नियंत्रण समाप्त करने थे। इसी के तहत ७१५ वस्तुओं पर ३१ मार्च २००१ को मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त किए गए।

उपरोक्त प्रक्रिया का संक्षिप्त परिचय जरूरी था। क्योंकि समय से दो साल पहले ही भारत को जो मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने पड़ रहे हैं, उसके पीछे अमरीका की नाराजगी है। और जैसा अमरीका ने चाहा था वैसा ही हुआ। भारत के बारे में आजकल अमरीका की उदारता जिस कदर बढ़ गयी है, कई मोर्चों पर वह शक पैदा करती है। अभी दो महीने पहले की ही बात है जब विश्व व्यापार संगठन के डीजी माइक मूर से मिलने एक भारतीय प्रतिनिधि मण्डल गया था। मूर महोदय ने इस बात पर एतराज जताया कि मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने के बाद वह जिस तरह से सीमाशुल्क लगा रहा है वह उचित नहीं है। मूर महोदय ने किसके इशारे पर ऐसा कहा यह आसानी से समझ में आ जाता है क्योंकि न्यूजीलैण्ड के विदेश व्यापार मंत्री रहते हुए भी उन्होंने उसी अमरीका का भला किया जिस अमरीका ने न्यूजीलैण्ड की कृषि को तबाह करने में अहम भूमिका निभाई थी। न्यूज़ीलैण्ड की कृषि भले ही तबाह हो गई हो। लेकिन माइक मूर को उनका इनाम मिल गया और वे विश्व व्यापार संगठन के महानिदेशक नियुक्त हो गए। इसलिए जब कुछ दिनों पहले भारत सरकार ने बाउण्ड ड्यूटी से बहुत कम चीनी पर पर ६० प्रतिशत सीमा शुल्क और ८५० रुपए प्रति पूर्ति शुल्क (एंटी डम्पिंग ड्यूटी) लगा दी तो उनके कान

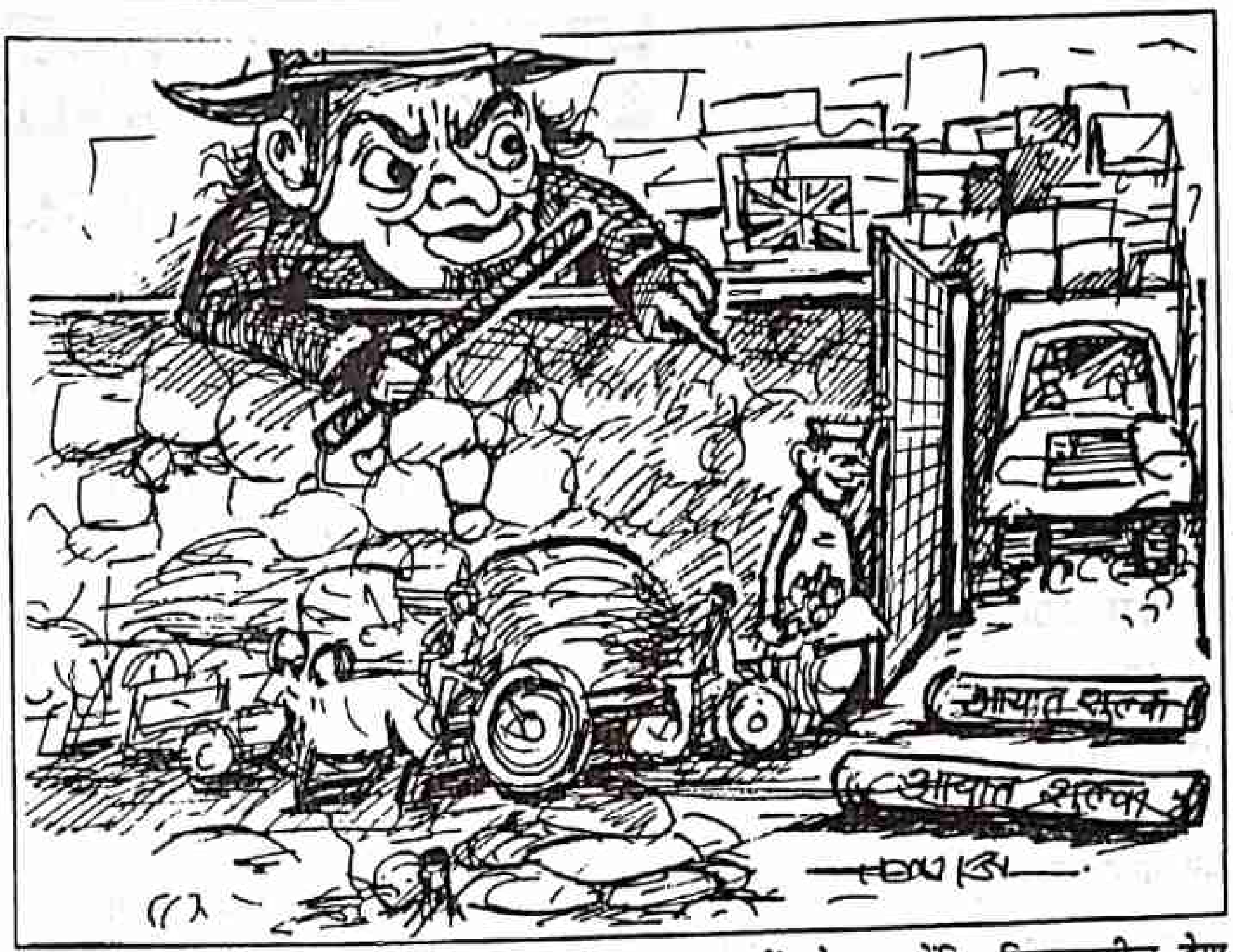

खड़े हो गए। जैसा कि इस वर्ष प्रस्तुत बजट में वित्तमंत्री श्री यशवंत सिन्हा ने तेलों पर शुल्क ७५ प्रतिशत, चावल पर शून्य से बढ़ाकर ८० प्रतिशत, बिना पालिस चावल पर ७० प्रतिशत, मक्का पर ५० प्रतिशत, गेहूं पर ५० प्रतिशत, अंगूर पर २५ प्रतिशत से बढ़ाकर ३५ प्रतिशत, सेब के आयात पर ३५ प्रतिशत से बढ़ाकर ५० प्रतिशत, शिशु आहार पर १५ से बढ़ाकर ३५ प्रतिशत, चाय, काफी, गरी, नारियल और सूखे मेवे पर आयात शुल्क ३५ से बढ़ाकर ७० कर दिया था। लेकिन यह रास्ते पर्याप्त नहीं हैं। पहले ही भारत ने कृषि पर बाउण्ड ड्यूटी १०० प्रतिशत, प्रसंस्कृत उत्पादों पर १५० प्रतिशत और खाद्य तेलों पर ३०० प्रतिशत तय कर रखा है। यानी सरकार इससे ज्यादा सीमा शुल्क नहीं लगा सकती। इसलिए इतने सीमा शुल्क का कोई बहुत

"जब विश्व व्यापार संगठन के डीजी माइक मूर से मिलने एक भारतीय प्रतिनिधि मण्डल गया था। मूर महोदय ने इस बात पर एतराज जताया कि मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने के बाद वह जिस तरह से सीमाशुल्क लगा रहा है वह उचित नहीं है। मूर महोदय ने किसके इशारे पर ऐसा कहा यह आसानी से समझ में आ जाता है।"

असर नहीं होगा क्योंकि विकासशील देश अपने निर्यात पर पहले ही इतनी सब्सिडी देते हैं कि इतना सीमा शुल्क लगाने के बाद भी वे भारतीय उत्पादों से सस्ते ही बैठेंगे।

हालाँकि नयी आयात-निर्यात नीति २००१ घोषित करते हुए वाणिज्य मंत्री ने कहा कि आयात पर नजर रखने के लिए एक निगरानी कक्ष स्थापित किया जाएगा और अगर ऐसा लगता है कि अंधाधुंध आयात से देश में विदेशी सामानों की बाढ़ आ रही है तो एंटी डंम्पिंग ड्यूटी लगाया जा सकता है और अगर उससे भी मामला न बना तो विश्व व्यापार संगठन के नियमों के तहत पुन: मात्रात्मक प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं। लेकिन यह सब इतना आसान न होगा। वाणिज्य मंत्री की 'नीति' घोषित होने के हफ्ते भर के अंदर ही संयोग से विदेश मंत्री जसवंत सिंह अमरीका में थे। उनके वहाँ पहुँचने के ठीक एक दिन पहले अमरीका के फेडरल रिजर्व के अध्यक्ष एलेन ग्रीनस्पैन ने विकासशील देशों द्वारा एंटी डम्पिंग ड्यूटी और प्रति पूर्ति शुल्क लगाने को गलत ठहराते हुए कहा कि "विकासशील देशों को अगर अपनी गरीबी दूर करनी है तो उन्हें आयात के लिए अपने बाजार पूरी तरह खोल देने चाहिए।" ऐसे में मात्रात्मक प्रतिबंधों के हटने के बाद भारत पुन: मात्रात्मक प्रतिबंध लगा ले ऐसा तो विश्व व्यापार संगठन के नियमों के अंतर्गत एक ही स्थिति में हो सकता है जब भारत का विदेशी मुद्रा भण्डार एकदम खाली हो जाए

Scanned with OKEN Scanner

और वह भुगतान संकट में आ जाए। अगर ऐसा नहीं हुआ तो आपको येन-केन प्रकारेण आयात करने ही पड़ेंगे। दूसरा कोई रास्ता नहीं है। या तो आप तबाह हो जाएँ तब खुले आयात से बच सकते है अथवा आप विश्व व्यापार संगठन से बाहर हो जाएँ तो आपको मुक्ति मिल सकती है। इसलिए श्री मारन द्वारा की गयी बातें यथार्थवादी कम, बयानबाजी ज्यादा है।

स्वदेशी कार उद्योग पर संकट

श्री मारन ने नई आयात-निर्यात नीति में कुछ और प्रमुख घोषणाएँ की हैं। जैसे विदेशी कारों का आयात। तीन साल से पुरानी कारों का आयात नहीं किया जा सकेगा। इसके अलावा केवल दाहिने हाथ की ड्राइविंग वाली कारों का ही आयात किया जा सकेगा। यह एक गलत कदम है। एक साल पुरानी कार का ही आयात किया जाए तो क्यों? आज दुनिया की कई प्रमुख कार निर्माता कंपनियाँ अपने उद्यम भारत में लगा चुकी है। जनरल मोटर्स, टोयोटा, फिएट, फोर्ड, देवू, हुंडई, सुजुकी, होण्डा, स्कोर्दा आदि भारत में अपने कारखाने स्थापित कर चुकी हैं। लेकिन आज भी वे अपने उत्पादन का २० से ५० फीसदी हिस्सा बाहर से आयात करती हैं। अकेले सुजुकी का आयात (वर्ष १९९९-२००० में) भारत के कुल आयात एक एक प्रतिशत था। फिएट भी अपने दो कारों सिएना और ऊनो में लगने वाली ३० प्रतिशत सामग्री इटली से लाती है। आज भी वे यहाँ केवल एसेम्बलिंग का काम कर रहीं हैं। आगे यह कार्य वे और आसानी से कर सकेंगी। मित्सुबिसी मोटर्स तो पहले ही पजेरो को आयात करके यहाँ बेच रही है। भरपूर मुनाफा के बाद भी इन कंपनियों ने यहाँ न तो कोई रिसर्च सेंटर खोलने की जहमत उठाई और न ही कोई उन्नत तकनीकि इस देश में ला रही है। टोयोटा ने क्वलिश को पिछले साल यहाँ बाजार में उतारा था जबकि वियतनाम में यही मॉडल वह १० साल पहले लाँच कर चुकी थी। आज जिसे २१वीं सदी की एम.ए.वी. (मल्टी एक्टीवटी वेहिकल) कहकर बेचा जा रहा है वह ८० के दशक की गाड़ी है। इन कंपनियों ने बड़े जोर-शोर से नयी आयात-निर्यात नीति का स्वागत किया तो केवल इसलिए कि इससे उनको देश को लूटने का और मौका मिल गया है।

उद्योग पर अनुचित निर्णय

इसके अलावा श्री मारन ने देशभर में सेज (स्पेशल इकोनॉमिक जोन) स्थापित करने की बात कही है। इन विशेष आर्थिक क्षेत्रों में निर्यातोन्मुखी इकाईयाँ स्थापित की जाएगी। इसके द्वारा सरकार अगले तीन सालों के भीतर विश्व व्यापार में अपनी वर्तमान ०.७२ प्रतिशत हिस्सेदारी को बढ़ाकर १ प्रतिशत करना चाहती है। ऐसे में देश को निर्यात में प्रतिवर्ष १८ प्रतिशत की वृद्धि करनी पड़ेगी जो वर्तमान औद्योगिक ढाँचे से संभव नहीं दिखता। इसलिए वह भी चीन की तर्ज पर इन विशेष आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना करना चाहती है। लेकिन सरकार को यह ध्यान में नहीं आया कि चीन ने आर्थिक क्षेत्रों को स्थापित करने और विकसित करने के लिए विश्व व्यापार संगठन में आना जरू नहीं समझा। आज जब उनका उत्पाद अतिरिक्त है तो वे विश्व व्यापार संगठन आना चाहते हैं। अब यह बात दीगर है कि आज चीन खुद कशमकश की स्थिति में और विशेषज्ञों की राय है कि वर्तमान ढाँ चीन पर संकट ला सकता है। इसलिए श्री मारन की इस बात में कोई तर्क नजर नह आता कि 'हम भी गुगली फेंकना जानते हैं। अगर ऐसा होता तो वे भारत में अमरीक सिगरेट कंपनियों को आने की अनुमति त तक न देते जब तक कि अमरीका अपने कु प्रांतों में बीड़ी पर लगे प्रतिबंध को समाप्त कर देता। यह बराबरी की बात होती। व्याप में जिस बराबरी के नाम पर एक षड्यंत्र तहत भारत विश्व व्यापार संगठन में शामि हुआ वह बराबरी नहीं बेचारगी है।

नयी आयात-निर्यात नीति-२००१

एक नजर में

- गुजरात और तमिलनाडु की तर्ज पर देशभर में 'स्पेशल इकोनॉमिक जोन्स' बनाने की घोषणा। इसके तहत निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिए वहाँ स्थापित इकाईयों को विशे सुविधाएँ प्रदान की जाएंगी।
- इसी तरह देशभर में विशेष कृषि निर्यात क्षेत्रों की स्थापना की जाएगी। लेकिन इससे एक ही तरह के उत्पादन को बढ़ावा मिलने और जैव विविधता को नुकसान होने का अंदेशा जताया जा रहा है।
- ३०० संवेदनशील वस्तुओं के आयात पर नजर रखने के लिए एक 'वार रूम' बनाने की घोषणा।
- रक्षा, संचार, जीवित पशु, रसायन और दवाइयों से जुड़ी ६०० वस्तुओं पर मात्रात्मक प्रतिबंध कायम रहेगा।
- तीन वर्ष से पुराने गाड़ियों और १० वर्ष से पुराने कैपिटल गुड्स के आयात पर प्रतिबंध।
- मांस और चमड़ों के आयात पर लगा प्रतिबंध समाप्त।
- राज्य सरकारें अब सीधे पेट्रोलियम पदार्थों का आयात कर सकती हैं।
- जिन वस्तुओं पर से मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त किए गए है उनमें १७० लघु उद्योगों के लिए आरक्षित थीं।
- विदेशी सिगरेटों और शराब के आयात पर लगे प्रतिबंध समाप्त कर दिए गए हैं।
- गेहूँ, चावल, मक्का, पेट्रोल, डीजल और यूरिया का आयात केवल राज्य व्यापार एजेंसियाँ ही कर सकती है।
- हीरा डॉलर खाता योजना के तहत ५ करोड़ तक का व्यापार करने वाला हीरा व्यापारी ५० लाख मूल्य तक के हीरे अपने साथ ले जा सकता है।
- सब्सिडीयुक्त निर्यात से निपटने के लिए प्रतिपूर्ति टैक्स लगाए जाने का विधान। जैसे इस समय चीनी के आयात पर ६० प्रतिशत सीमा शुल्क के साथ ८५० रुपये प्रति टन प्रतिपूर्ति शुल्क लगाने का विधान है।
- देश को डंम्पिंग ग्राउण्ड बनाने से रोकने के लिए विशेष परिस्थितियों में एण्टी डम्पिंग ड्यूटी लगाने की घोषणा।

Scanned with OKEN Scanner

कृषि पर बुरा प्रभाव

श्री मारन की नयी आयात-निर्यात नीति का सबसे बुरा असर भारतीय कृषि पर पड़ेगा। क्योंकि जिन ७१५ वस्तुओं पर से मात्रात्मक प्रतिबंध समाप्त किए गए हैं उनमें १४७ कृषि से संबंधित उत्पाद हैं। भारतीय कृषि बाजार पर पहले से नजर गड़ाए बैठे देशों के लिए यह एक स्वर्णिम रास्ते के खुलने जैसा है। जो यह कह रहें हैं कि कृषि को आधुनिक करना ही पड़ेगा, वे देश के साथ धोखा कर रहे हैं। विदेशी आयात खुलने के बाद भारतीय किसान के सामने चुनौती यह नहीं होगी कि उतना उत्पाद सस्ता है, और विदेशी उत्पादों को सब्सिडी मिली हुई है। वह तो सरकार के भरोसे खेती करता भी नहीं है। उसे भरोसा अपनी मेहनत और ईश्वर का होता है। उसमें सरकार कहीं नहीं आती। विदेशी आयात के खुलने से कृषि के सामने जो सबसे बड़ा संकट आएगा वह है – कृषि संस्कृति का विनाश। यह एक व्यवस्था थी जो विश्व के लिए भविष्य का आदर्श हो सकती है लेकिन वैश्वीकरण की आँधी में यह व्यवस्था टूटने के कगार पर है। पहले ही सरकार खेती को आधुनिक करने के नाम पर हमारी ऋषि कृषि पद्धति को काफी चोट पहुँचा चुकी है, लेकिन वर्तमान व्यवस्था उसको तार-तार कर सकती है। इसलिए सरकार ने आयात खोलकर हमारी कृषि व्यवस्था और संस्कृति पर प्रहार किया है जो आँकड़ों के बाहर की वस्तु है। हमारी कृषि संस्कृति उस तथाकथित 'एग्रीबिजनेस' से कहीं बेहतर है जो अन्न को मिलने वाले मूल्य को नहीं बल्कि लोगों की भूख को प्राथमिकता देती है।

नयी आयात निर्यात नीति में वाणिज्य मंत्री श्री मारन ने विशेष कृषि निर्यात जोन बनाने की बात भी कही है। ये विशेष जोन केवल उन्हीं वस्तुओं का उत्पादन करेंगे जिसकी विदेशों में माँग हो। इसके भारतीय कृषि की बहुफसलीय व्यवस्था तो चौपट होगी, साथ ही जैव विविधता को भारी नुकसान होगा।

सरकार 'एग्रो-बिजनेस' के उस मॉडल पर चल रही है जो इसे एक विशुद्ध व्यापार मानता है। उसके अनुसार १९५० में विश्व का कृषि व्यापार ४२० अरब डॉलर का था

हमारी कृषि संस्कृति उस तथाकथित 'एग्रीबिजनेस' से कहीं बेहतर है जो अन्न को मिलने वाले मूल्य को नहीं बल्कि लोगों की भूख को प्राथमिकता देती है।

जिसके वर्ष २०२८ तक बढ़कर १० खरब डॉलर पहुँच जाने की उम्मीद है। लेकिन १९५० में कृषि के कुल उत्पादन पर एक तिहाई अधिकार किसानों का था। जो २०२८ में घटकर १० प्रतिशत पर आ जाएगा। यानी खेती व्यापार होगी। जमीन पर अधिकार किसानों का नहीं व्यापारियों का होगा। किसान बचेगा नहीं, बचेगा तो केवल मजदूर जो व्यापारियों के खेतों में काम करेगा। विकसित देश विशेषकर अमरीका, यूरोपियन यूनियन और आस्ट्रेलिया एक ऐसी रणनीति पर काम कर रहें हैं जो २० वर्ष बाद विकाशील देशों की संप्रभुता को अनाज के बदले उनके पास गिरवी रखने पर मजबूर कर दे। १९९५ में अमरीका ने ९० मिट्रिक टन, यूरोपियन यूनियन ने २० मिट्रिक टन (अनुमानित) और आस्ट्रेलिया ने १५ मिट्रिक टन अनाज का निर्यात किया था। इंटरनेशनल फूड पालिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट के आंकड़ों के अनुसार २०२० तक अमरीका का निर्यात १२० मिट्रिक टन, यूरोपियन यूनियन का २५ मिट्रिक टन और आस्ट्रेलिया का २२ मिट्रिक टन पहुँच जाएगा। इसके उलट पूर्वी एशिया में आयात १९९५ के ३५ मिट्रिक टन से बढ़कर २०२० में ७५ मिट्रिक टन, पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका में ४० मिट्रिक

विकसित देश विंशेषकर अमरीका, यूरोपियन यूनियन और आस्ट्रेलिया एक ऐसी रणनीति पर काम कर रहें हैं जो २० वर्ष बाद विकाशील देशों की संप्रभुता को अनाज के बदले उनके पास गिरवी रखने पर मजबूर कर दे।

टन से बढ़कर ६० मिट्रिक टन, लातिन अमरीका में २० से बढ़कर २२ मिट्रिक टन, सब सहारा अफ्रीका में ८ मिट्रिक टन से बढ़कर १२ मिट्रिक टन और दक्षिण-पूर्व एशिया में वर्तमान ७ मिट्रिक टन से बढ़कर १० मिट्रिक टन हो जाएगा।

भारत इस परिदृश्य में कहीं आता है तो केवल खरीददार बनकर। इसलिए वर्तमान सरकारी रुख से भारतीय कृषि का तबाह होना तय है।

कृषि क्षेत्र में कारपोरेशन और कंपनीकरण की शुरुआत करके सरकार न केवल भूखे लोगों के पेट पर लात मारने का काम कर रही है बल्कि वह लोगों के हाथ से रोजगार भी छीन रही है। एफ.ए.ओ. के एक आकलन के अनुसार १९५० में विश्व स्तर पर कुल रोजगार का ३६ प्रतिशत विकसित देशों में और ८१ प्रतिशत विकासशील देशों में कृषि क्षेत्र में था। जो अगले दस सालों तक विकसित देशों में ६ प्रतिशत और विकाशील देशों में ५० प्रतिशत रह जाएगा। जिसका सीधा अर्थ है कि आने वाले समय में विकासशील देशों में बेरोजगारी तेजी से बढ़ेगी। भारत के लिए यह चिंता की बात है क्योंकि आज भी भारत की ६० प्रतिशत कार्यशक्ति कृषि क्षेत्र में लगी हुई है और वर्तमान ढाँचे को पोषित किया जाता है तो आने वाले समय में जब २०१० तक भारत की आबादी ११५ करोड़ से ऊपर हो जाएगी तो क्या यह एग्री-बिजनेस मॉडल बहुसंख्य भारतीयों को बेरोजगार और भारत को खाद्यान्नों का बड़ा आयातक नहीं बना देगी? भारत के रणनीतिकार केवल अपने भरे पेट को देखकर नीतियाँ न बनाएँ बल्कि उन खाली पेटों को भी देखें जिनकी आबादी २५ से ३० करोड़ के बीच है।

मात्रात्मक प्रतिबंधों का हटना कृषि, वस्त्र और दैनंदिन प्रयोग की वस्तुओं की बाढ़ पैदा कर देगा। इससे न केवल किसान तबाह होंगे बल्कि लघु उद्यमी भी निशाने पर होंगे। यह भारतीय जनता द्वारा चुनी गयी सरकारों का देश की जनता के साथ किया गया छल है। यह छल देश के लोगों को तबाह कर सकता है। अत: इस विपत्ति काल में जन-मानस को वास्तविकताएँ समझनी होंगी। ■

Scanned with OKEN Scanner

खेती को तबाह कर देगी नयी आर्थिक नीति

■ निरंकार सिंह

आज भी सरकार में बैठे लोग उन्हीं लोगों की बात सुन रहे हैं, जो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और वैश्विक अर्थ-व्यवस्था के पैरोकार हैं। इस बात का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि गैट समझौते के समय जो हमारे वार्ताकारों के प्रमुख थे, वे बाद में गैट के उपमहानिदेशक बनकर चले गये। इसीलिये तो डेरी को लेकर पोल्ट्री और मछली पालन जैसे कुटीर उद्योगों के तबाही के रास्ते खोल दिये गये है।

देश की नयी आयात-निर्यात नीति से जिन चीजों के दूसरे देशों से मंगाने के लिए रास्ते खुले है उनमें १४७ उत्पाद कृषि से सम्बंधित हैं। इनमें समान्य चावल, गेहूँ दड़ा, ज्वार, बाजरा, मक्का, नारियल आदि भी शामिल है। इसके साथ ही सब्जियों में आलू, शकरकंद, फूलगोभी, बन्दगोभी और फलों में नारंगी एवं अंगूर भी शामिल है। इसकी सूची लम्बी है, पर यहां उन चीजों को जिक्र किया जा रहा है जो भारत में पहले से ही ज्यादा है। यह सब विश्व व्यापार संगठन की शर्तों के तहत कृषि पर किये गये समझौते का ही नतीजा है। इस समझौते में प्रावधान है कि भले ही आपके यहां आवश्यकता से अधिक उत्पादन हो, या आपके यहां कीमतें कम हो फिर भी आपको आयात करना पड़ेगा। इसे हम डिसप्यूट कमेटी में भी नहीं ले जा सकते हैं। अब हमारे यहां अनाज के भंडार पहले से भरे हैं और किसानों का चावल और गेहूं मंडियों में बिक नहीं रहा है, पर इसके बावजूद हमें यह मंगाना पड़ेगा। ऐसा नहीं है कि यह समस्या दूसरे देशों के सामने नहीं आयी, पर उन्होंने इसके पालन के लिए समय मांगा है। सिएटल की विफलता विश्व व्यापार संगठन में एक महतवपूर्ण पड़ाव रही है। इससे यह भ्रम टूट गया है कि इसमें फेर बदल हो सकता है। हमारी सरकार ने एक रास्ता निकाला है कि वह अपना गेहूं दूसरे देशों को चार रूपये किलो के हिसाब से बेच देगी। अब जो गेहूं अपने देशवासियों को सात-आठ रूपये किलो मिलता हो, उसे दूसरे देश को चार रूपये किलो बेचा जाए, यह कौन-सी नीति है? यह तो हमारे देश के राजनेता ही जानते होंगे। सामान्य समझ से परे की बात है। अब यह बात साफ दिखाई दे रही है कि भारत की खेती को बरबाद करने के सभी रास्ते खोल दिये गये है। दुनिया भर में महशूर खाद्यान्न क्रांति के जनक नार्मन ई बोरलाग ने भी भारत को यह चेतावनी दी थी कि वह अपनी खेती को बचाने के लिए डब्लू.टी.ओ. के प्राविधान को बहुत सोच समझ कर लागू करे। लेकिन हमारे देश में सत्ता के नशे में चूर नेताओं को ऐसी सलाहों पर विचार-विमर्श करने की फुर्सत कहां है? आखिर इस देश को गुलाम बनाने में जयचंद और मीरजाफरों की कमी कभी नहीं रही है।

आज भी सरकार में बैठे लोग उन्हीं लोगों की बात सुन रहे हैं, जो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और वैश्विक अर्थ-व्यवस्था के पैरोकार हैं। इस बात का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि गैट समझौते के समय जो हमारे वार्ताकारों के प्रमुख थे, वे बाद में गैट के उपमहानिदेशक बनकर चले गये। इसीलिये तो डेरी को लेकर पोल्ट्री और मछली पालन जैसे कुटीर उद्योगों के तबाही के रास्ते खोल दिये गये है। कहीं कोई यह देखने वाला नहीं है कि यह सब क्या हो रहा है। गांवों का तेल उद्योग विश्व व्यापार के निर्देशों के शिकंजे से पिसने लगा है। सरसों आयातित तेल का एकमात्र शिकार नहीं है केरल में नारियल के भाव आधे गिर पड़े हैं। दूसरी जगहों से भी खबरें अच्छी नहीं आ रही हैं। रूई उपजाने वाले किसान अपना ट्रैक्टर बेच रहे हैं। दक्षिण में मूंगफली, गेहूं, धान, रबर, ईख तथा कृषि के दूसरे उत्पादनों से गिराव[illegible] आयी है। छोटे किसान असहाय हो गये [illegible] आत्महत्या करने वालों की संख्या बढ़ने ल[illegible] है। जीवन निर्वाह के लिए कृषि पर आधा[illegible] हमारी दो तिहाई आजादी का भविष्य आ[illegible] जितना अंधकार में दिख रहा है, उतना प[illegible] कभी नहीं दिखा। पांच वर्ष पहले डब्लू.टी.ओ[illegible] समझौते और उससे पहले गैट समझौते से कु[illegible] बड़े अधिकारियों और उच्च वर्ग का हित [illegible] सकता हैं, पर इस समझौते से समाज के ऐ[illegible] करोड़ों लोग, जो भूखे, आश्रयहीन अशिक्षित [illegible] जिनके पास न तो कोई स्थायी सम्पदा है अ[illegible] न वैकल्पिक आजीविका ढूंढने के लिए कोई शि[illegible] - के सामने भयानक संकट पैदा कर दिया है[illegible] पिछले तीन माह में ४८० किसानों की आत्मह[illegible] इसका प्रमाण है।

भारत के ७० करोड़ किसान उसकी कु[illegible] आबादी का ७० प्रतिशत हैं। इसलिए कृषि औ[illegible] उसके सहयोगी मोर्चो पर यदि हम असफल [illegible] तो हमारी पूरी अर्थ-व्यवस्था चौपट हो जाएगी[illegible] पिछले ३० वर्षो के दौरान यह बार-बार दे[illegible] गया है कि कृषि उत्पादन राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस[illegible] के विकास पर काफी हद तक असर डाल[illegible] है और निर्माण के पैमाने और गति को प्रत्य[illegible] रूप से निर्धारित करता है। यह हलके उद्यो[illegible] के लिए कच्चे माल की जरूरतों के ६५ प्रतिश[illegible] की आपूर्ति औद्योगिक उत्पादों के लिए बाजा[illegible] प्रदान और निर्माण के लिए धन जमा कर[illegible] है। कृषि का उत्पादन जब भी कम हुआ है [illegible] उसके बाद हलके और भारी औद्योगिक उत्पाद[illegible] में भी भारी कमी आयी है। इसके बाद ज[illegible] कृषि की हालत सुधरी तो औद्योगिक उत्पाद[illegible] दोबारा बढ़ना शुरू हो गया।

वास्तव में अब हम अपनी कृषि [illegible] समस्याओं को दूसरी समस्याओं से अलग क[illegible] नहीं देख सकते है। हमें व्यापार और शुल्[illegible] सम्बन्धी समझौतों जैसे- "गैट" विश्व व्यापा[illegible] संगठन की शर्तों को बारीकी से समझना होग[illegible] और ध्यान में रखकर अपनी नीतियां बनानी होगी। हमारी ये नीतियां और भावी

कार्य-प्रणालियां एवं पहल की दिशा ही हमारे कृषि सम्बन्धी शोध और विकास के कार्यों का स्वरूप निश्चित करेगी। हम सब अंतर्राष्ट्रीय समझौतों और नियमों के अनुरूप ही हमको तय करना होगा कि हम दूसरे देशों को उनके उत्पादों को भारत में बेचने और बाजार देने की सुविधाएं किस रूप मे प्रदान करें और इन समझौतों पर ही आधारित होगी - हमारे कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और कुशलता। ये अन्तर्राष्ट्रीय समझौते ही इस बात को भी तय करेंगे कि हम अपनी कृषि को किस सीमा तक घरेलू समर्थन दे सकेंगे। नयी नीतियों के तहत कुछ समय बाद कृषि उत्पादों और वस्तुओं की सफाई एवं पादप सफाई के नाम पर भी प्रतिबंध लग जायेंगे। इसके साथ ही कृषि उत्पादों और वस्तुओं के आयात एवं निर्यात, दोनों पर यह मांग होने लगेगी कि रसायनों और कीटनाशी दवाओं के इस्तेमाल को अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार धीरे-धीरे कम किया जाए। अन्तर्राष्ट्रीय सम्पत्ति, अधिकारो (आई.पी.आर.) के प्रति भारत की वचनबद्धता के कारण भी उसके सामने कई मुशकिलें आने वाली हैं। अब दुनिया में कहीं भी विकसित होने वाली तकनीक के अधिकार के व्यापारिक प्रतिबन्धों के मुद्दे जन्म लेने वाले हैं। हमारी अपनी शोध भी अब विदेशों में विकसित तकनीक पर आधारित नहीं हो सकेगी। ये सब बहुत बड़ी दबाव डालने वाली समस्याएं हैं।

"हरित-क्रांति" के बाद अब हमारा खाद्यात्र उत्पादन भी लगभग ठहर सा गया है। हमारे किसानों को उत्तम बीज, खाद और कीटनाश्कों के लिए दर-दर भटकना पड़ता है और ये चीजें भी उसे सही ढंग से सही समय पर नहीं मिलती हैं। देश के तमाम कृषि विश्वविद्यालय, संस्थान और राज्य सरकारों के कृषि विभाग, किसानों की इन समस्याओं का आज तक कोई निराकरण नहीं कर सके हैं। इसके बावजूद किसान जो कुछ पैदा करता है उसकी लागत भी उसे नहीं मिल पाती है। देश में पिछले साल लगभग साढ़े बीस करोड़ टन की रिकार्ड कृषि पैदावार हुई है। लेकिन इसी देश में बीस करोड़ लोगों के घर दोनों वक्त चूल्हा नहीं जलता है और आधी से अधिक आबादी को संतुलित आहार सुलभ नहीं है। उधर आबादी बढ़ने से हर साल ५० लाख टन अतिरिक्त खाद्यात्र की जरूरत पड़ेगी।

भारत इस मामले में सौभाग्यशाली है कि उसके पास दुनिया की सबसे अच्छी उपजाऊ

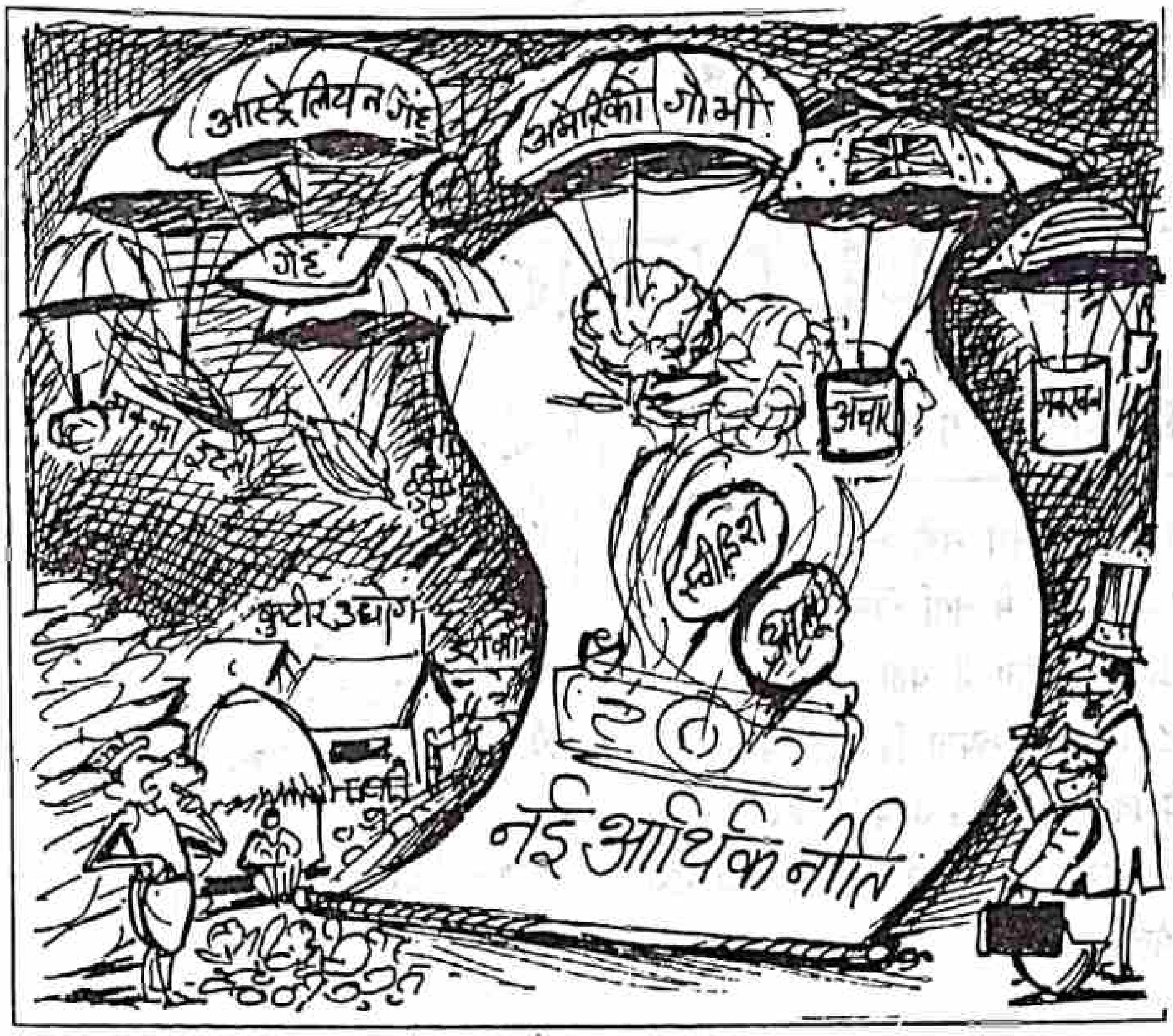

जमीन है जिसमें बारहों-मास खेती की जा सकती है लेकिन दुर्भाग्य से औसत कृषि उत्पादन ढ़ाई टन प्रति हैक्टेयर है, जो चीन के मुकाबले में आधा है। हमारी मूल सामर्थ्य हमारे प्राकृतिक संसाधन ही है जिनका अभी तक पूरा उपयोग हम नहीं कर सके है। इसके अलावा हमारे पास जीवित संसाधनों का भी उत्तम आधार है। हमारा जैव-वैविध्य बहुत समृद्ध है और प्रचुर धुप, गरमी, विभिन्न प्रकार की कृषि योग्य जलवायु जिसमें ध्रुव-देशों जैसी ठंड, उष्ण-कटिबंधीय मंडल की हरियाली रेगिस्तानी इलाका और काफी वर्षा वाला क्षेत्र शामिल है जिसका हम पूरा उपयोग नहीं करते हैं। खेती-बारी में आधुनिक तकनीक का उपयोग भी अभी बहुत कम हो रहा है।

भारत इस मामले में सौभाग्यशाली है_कि उसके पास दुनिया की सबसे अच्छी उपजाऊ जमीन है जिसमें बारहों-मास खेती की जा सकती है लेकिन दुर्भाग्य से औसत कृषि उत्पादन ढ़ाई टन प्रति हैक्टेयर है, जो चीन के मुकाबले में आधा है। हमारी मूल सामर्थ्य हमारे प्राकृतिक संसाधन ही है जिनका अभी तक पूरा उपयोग हम नहीं कर सके हैं।

कृषि परिस्थितिकी विज्ञान की बारीकियों को किसानों को बताने की जरूरत है। मध्य भारत के शुष्क क्षेत्रों में गेहूं और चावल का अब और ज्यादा उत्पादन संभव नहीं है। इसलिए वहां के किसानों को दालों, तिलहन, भाजी,फल और पशुधन पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। गेहूं और चावल की पैदावार के लिए अन्य उपचाऊ क्षेत्रों की तलाश करनी चाहिए। हर राज्य में कृषि उत्पादों के उपयुक्त स्थानों का चुनाव उपयुक्त आबो-हवा और परिस्थितियों के अनुकूल होना चाहिए। भारत के पूर्वी भाग में कृषि के विकास के लिए उपयुक्त जलवायु और जल-साधन उपलब्ध है लेकिन यहां कृषि उत्पादों की पैदावार बढ़ाने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। देश को आर्थिक सम्पन्नता प्राप्त करने के लिये इस हालत को बदलना होगा। दुर्भाग्य से हमारा बजट औद्योगिक विकास राजकोषीय घाटे और कर राजस्व घाटे एवं मुनाफे तक सिमट कर रह गया है। गांवों के मजदूर, छोटे किसान, कृषि क्षेत्र और हथकरघा जैसे भारतीय अर्थ-व्यवस्था के बहुत ही महत्वपूर्ण अंग बजट के भी दायरे में नहीं आते है। अब हमने कृषि के क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए अपना द्वार खोलकर अपने ही विनाश को आमंत्रित किया है। अब इन बदली हुई परिस्थितियों में भारत को यह तय करना है कि वह किसके साथ जाए? विकसित या विकासशील देशों के साथ? विशेषज्ञों का कहना है कि भारत को विकासशील देशों के साथ जाना चाहिए। ■

Scanned with OKEN Scanner

बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुली छूट : देश की आजादी को गंभीर संकट

■ मूंगालाल सुरेका

राजस्थान जैसे सूखे क्षेत्र में खरीफ की एक फसल में वर्षा होने पर बाजरे का उत्पादन होता है वहां बाजरे का बीज ८००-९०० रूपया क्विंटल खरीद जब पैदावार बाजार में आये तो ४०० रूपया प्रति क्विंटल पर खरीददार उपलब्ध नहीं होते।

भारत में आम नागरिक और विशेष रूप से देश के ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी गरीब किसान वर्ग अपनी दैनिक रोजी रोटी की समस्याओं में इस तरह से व्यस्त रहते हैं कि उन्हें देश की अन्तरराष्ट्रीय गतिविधियों के बारे में साधारणतया कोई ज्ञान नहीं होता। विश्व व्यापार संगठन के तत्वाधान में भारत में अप्रैल २००० में ७२१ वस्तुओं का आयात खुला और फिर अप्रैल २००१ में इतनी वस्तुओं का आयात खोला गया। इस प्रकार १४२९ वस्तओं का आयात खोल दिया। इसे भारत सरकार आयात पर मात्रात्मक प्रतिबंध हटाने की नीति का क्रियान्वयन बता रही है। भारत का किसान वर्ग अचानक यह देखकर भौंचक्का रह गया कि सरसों, सोयाबीन व अन्य खाद्य तेलों की जिन्सों के भाव लड़खड़ाते हुए जमीन पर आ गिरे। जिस सरसों का भाव किसान को २२००-२३०० रूपया क्विंटल मिलता था उसे ११०० रूपया क्विंटल पर भी बाजार में नहीं बेचा जा सकता। सोयाबीन व अन्य खाद्य तेल विदेशों से एक वर्ष में ४७,००० करोड़ की लागत के आयात किये जाने लगे। देश में किसान इन जिन्सों की खेती करने या नहीं करने के असमंजस में पड़ गया और खाद्य तेल की मिलें देश में ८० प्रतिशत से अधिक तो बंद हो चुकी हैं और बाकी बंद होने के कगार पर है। इस कृषि आयात का आलम यह रहा कि राजस्थान जैसे सूखे क्षेत्र में खरीफ की एक फसल में वर्षा होने पर बाजरे का उत्पादन होता है वहां बाजरे का बीज ८००-९०० रूपया क्विंटल खरीद जब पैदावार बाजार में आये तो ४०० रूपया प्रति क्विंटल पर खरीददार उपलब्ध नहीं होते। देश के गरीब से गरीब किसान दूध व दूध की उत्पादक वस्तुएं बेचकर डेयरी के धंधे से अपनी रोजाना की रोटी चालाते हैं। उन्हें आर्थिक रूप से बर्वाद करने के लिए यूरोपियन देशों की डेयरी के उत्पादनों का आयात खोल दिया गया है। चावल, ज्वार और बाजरा जैसी जिन्सों का आयात अगर भारत में खुला कर दिया जाय तो यह नीति किसानों को एक प्रकार का नोटिस देने के बराबर है कि वे खेती छोड़कर शहरों में एकत्रित हो जाये और वहां जीविका नहीं मिलने पर भूख के दिन बितायें। भारत में किसानों की आत्महत्याओं के समाचार सुर्खियों में आते रहे हैं और तथ्यों के आधार पर इन समाचारों की पुष्टि है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य है कि आजादी की आधी सदी गुजरने के बाद भी खेती या उससे सम्बन्धित उद्योग धंधे, दस्तकारों व पशुधन की घोर उपेक्षा होती रही है और परिणामस्वरूप हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था जर्जर होती जा रही है। फिर भी यह अनुमान भारत का किसान वर्ग नहीं लगा सका कि बाजरा, ज्वार, चावल एवं खाद्य तेल की जिन्सें दाल आदि का खुला आयात यूरोप के देशों से होने लगेगा। इस तरह की नीतियों के लिए किसानों को भी किसी ने बताया नहीं और भारत के किसान या उनके प्रतिनिधियों की कोई राय इस तरह का समझौता करने में नहीं ली गयी। यूरोप के पश्चिमी धनी देश जो आपस में लड़ा करते थे और जिनके परस्पर संघर्षों की बजह से पहला व द्वितीय विश्व युद्ध हुआ, वे सब इस षड़यंत्र के लिए एक हो गये कि पुराने औपनिवेशक देशों को आजाद करने के बाद उनके रहन सहन में जो अन्तर आया है उसे पुनः ऊँचा उठाने के लिए एशिया व अफ्रीका के गरीब देशों को कर्जे से लादकर उनके नौकरशाहों को और सत्ता के उच्चतम नेताओं को लाभ देकर एक षड़यंत्र के रूप में यह विश्व व्यापार संगठन का समझौता चुपचाप कर लिया गया। भारतीय संसद के २५० सदस्यों ने लिखकर आवेदन किया कि विश्व व्यापार संगठन के इस समझौते की पुष्टि के लिए संसद में खुला विचार होना चाहिए, वह अनुमति नहीं दी गयी। इस प्रकार भारत के किसानों पर अचानक एक विदेशी खतरा मंडराने

Scanned with OKEN Scanner

लगा और चूंकि यह सब बिना देश में पूरी तरह से चर्चाएं किये बिना हुआ, अतः देश की आम जनता विशेष तौर से किसानों को एक भयंकर आशंका है कि भारत की आजादी पर पुनः कोई गम्भीर संकट आने वाला है। गुलामी के दिनों में एक विदेशी ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हमारी खेती व छोटे उद्योगों को नष्ट किया था। आज का भारत १०,००० बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की गतिविधियों के लिए खोल दिया गया है।

सबसे ज्यादा कृषि के बाद सबसे अधिक रोजगार लघु व कुटीर उद्योगों से प्राप्त होता है। करीब ३८ लाख से अधिक इकाईयों के द्वारा जो रोजगार देश की गरीब जनता को प्राप्त हो रहा था उनमें से १० प्रतिशत इकाईयां तो पहले भी बीमार थी लेकिन इस नई आयात व आर्थिक नीतियों ने अब करीब-करीब ८० प्रतिशत से अधिक इकाईयों को बीमार कर दिया है और आधे से अधिक बंद हो चुकी हैं। देश में बेरोजगारी का संकट इतना बढ़ गया है कि अब पानी सिर से ऊपर बहने लगा है।

भारत के वित्तमंत्री विकास दर की वृद्धि के लक्ष्य की बात करते थकते नहीं है। भारत की १०० करोड़ जनता उनसे पूछना चाहती है कि कृपा करके यह बतायें कि आपके इस "ड्रीम बजट" से रोजगार में कितनी वृद्धि होगी। जो लोग सस्ती कीमत पर अन्न लेकर भीख पर जीवनयापन करना नहीं चाहते, उन्हें रोजगार देने की क्या व्यवस्था है। लक्ष्य बजट के करोड़ों के प्रबधान से निर्धारित नहीं किया जाकर देश के रोजगार की वृद्धि के आंकड़ों से बनना चाहिए। किसानों व गरीब लोगों की क्रयशक्ति के मानदण्ड तय किये जाय और उस क्रयशक्ति में वृद्धि की क्या दर होगी? जनता इस लक्ष्य की घोषणा की प्रतीक्षा करेगी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का नवनिर्माण ग्रामीण विकास के नारे पर खड़ा किया गया था, गांधीजी के इस वाक्य को देश के नेता दोहराते थकते नहीं है। केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकार के प्रत्येक कार्यालयों में महात्मा गांधीजी के फोटो आज भी लगे हुए हैं। कोई भी विदेशी पर्यटक या बड़ी हस्ती जब भारत आती है तो उन्हें महात्मा गांधी की समाधि पर फूल माला चढ़ाने के लिए लाया जाता है। क्या ये विदेशी जानते नहीं है कि भारत के वर्तमान आर्थिक सुधार, खुले आयात की नीति पूंजी व श्रम के युद्ध में, भारत कहां खड़ा है। गांधीजी के विचार, चरखा व खादी, ग्रामीण उद्योग व सादगी से जीवन व्यतीत करने के बारे में क्या वे भारतीय अनुयायी किस तरह की नीतियों का समर्थन करके देश की आजादी को किस प्रकार संकट में डाल रहे हैं। इस प्रकार का ढोंग देश के जन मानस को किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं होगा।

केन्द्रीय सरकार के वर्तमान बजट इस समय कुल मिलाकर ३,७५,२२३ करोड़ का है। पूंजी खाते में कुल १,२८,३१४ करोड की प्राप्ति होने वाली है जिसमें से केवल हमारे कर्जे के ऊपर ब्याज की अदायगी १,१२,३०० करोड़ और देने होंगे। स्थिति ऐसी बन रही है कि ब्याज देने के लिए सरकार को नया कर्जा लेना पड़ेगा। कुल मिलाकर ३,७५,००० करोड़ के बजट में पुंजी आयोजना के व्यय में कुल ४,८७५ करोड़ रू. की रकम रखी गयी है जो नया पूंजी निवेश बजट की १० प्रतिशत से कम रकम का ही होगा।

देश में शेयर बाजार किस प्रकार से तेजी से डूब रहा है और भारतीय मुद्रा रूपये की साख भी इस प्रकार नीचे गिर रही है उससे हमारे देश की अन्तरराष्ट्रीय साख के बारे में तो हम कुछ भी कल्पना करें लेकिन केंद्रीय सरकार के बड़े मंत्री अगर अन्तरराष्ट्रीय शक्तियों से देश के लिए प्रमाण पत्र प्राप्त करने में रूचि रखते हों तो उन्हें यह आशा छोड़ देनी चाहिए। देश की साख व ताकत का वास्तविक प्रमाणपत्र देश की १०० करोड़ जनता के रोजगारों के नये निर्माणों, उनकी क्रयशक्ति में वृद्धि उनकी सम्पन्नता व उनकी सुख सुविधाओं से ही सिद्ध की जा सकती है। एक अत्यन्त चिंताजनक विषय यह है कि भारत की संसद को चुने हुए प्रतिनिधि एक भीड़तंत्र में परिवर्तित करने का प्रयास कर रहे हैं और चलने नहीं दे रहे हैं। यहीं परिस्थिति राज्य की विधानसभा में है। जब संसद व विधानसभाओं को उनके चुने हुए सदस्य ही चलने नहीं देंगे तो भारतीय आजादी का संकट इस प्रकार गहरा जायेगा कि कोई विदेशी सरकारों का मन दुबारा हमारा उपनिवेश बनाने के लिए ललचा सकता है।

विश्व व्यापार संगठन के तत्वाधान में भले ही भारत, अमरीका व यूरोप जैसे धनाढ्य देशों के साथ बंध गया हो लेकिन हमारी आर्थिक परिस्थितियों की यह मांग है कि हमारे पास असीम जनशक्ति की संपदा है, उनके पास पूंजी का बाहुल्य है। अतः हमारी तमाम विकास योजनाएं मूलतः श्रम व रोजगार प्रधान होनी चाहिए, उनकी योजनाएं पूंजी व तकनीक प्रधान होंगी। वे अपने साधनों के आधार पर अपनी कृषि को २०० से ३०० प्रतिशत तक सहायता देकर कृषि जिसों के उत्पादन में पहाड़ खड़े कर चुके हैं और वे हमारे बाजार के लिये आये हैं। हमारे किसान को १० प्रतिशत से अधिक ऋण सहायता न दें वे इस समझौते से हमें बांधना चाहते हैं ताकि हम पूंजी के अभाव में भूखे ही बने रहें और उनके उत्पादन को बाजार देने के लिए लालायित रहें। जिन्हें आर्थिक सुधारों का नाम दिया जा रहा है वह हमारे आर्थिक विनाश के रास्ते हैं जिन्हें अपनाकर कोई लोकतांत्रिक सरकार भारत में सत्ता में कायम नहीं रह सकती है।

कुछ अन्य वास्तविकताओं को भी पहचानने की भी आवश्यकता है। महात्मा गांधी और श्री जवाहरलाल नेहरू के अनुयायी कांग्रेस की प्रतिनिधि सरकार ने इस गैट समझौते पर हस्ताक्षर किये थे, अपनी पार्टी की सारी परम्पराओं के साथ उन्होंने एक खुला विद्रोह करके इस विदेशी दबाव को स्वीकार किया था और भारत की सम्प्रभुता के साथ समझौता किया था। तीसरे मोर्चे की सरकार ने विरोध में रहकर कुछ भी कहा जो, उन्होंने इन्हीं नीतियों का सरकार में आकर समर्थन किया। आज विरोध में बैठकर वे क्या, कांग्रेस की अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी भी इस नीतियों के विरूद्ध भारतीय गांवों व किसानों को लुभाने के लिए बोल रही है। सबसे दयनीय राजनीतिक अवस्था इस समय भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की है। उनके अन्य दलों के साथी उनको इसलिए नेता स्वीकार करते हैं कि वे भारतीय जनता पार्टी के मुख्य एजेण्डा हिन्दुत्व को सत्ता के संतुलन के पक्ष में छोड़ सकते हैं लेकिन उनके स्वयं के दल में वे पूरी तरह से अकेले पड़ गये हैं। केन्द्रीय सरकार की आर्थिक सुधारों की व विश्व व्यापार संगठन सम्बन्धी नीतियों को उनके राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के साथी घोर विरोधी हैं और अपना विरोध चिल्ला चिल्लाकर प्रकट कर रहे हैं। उनके समर्थन के बिना वाजपेयी जी की राजनीति में प्रधानमंत्री चुने जाने की

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

Scanned with OKEN Scanner

आयोडीनयुक्त नमक का जीवन विरोधी कुचक्र

बड़ी कंपनियों के तथाकथित आयोडीनयुक्त नमक स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। इस कोढ में खाज यह भी है कि फूड एण्ड न्यूट्रिशन बोर्ड भारत सरकार से जारी किए गए एक कैलेण्डर में गर्भावस्था में आयोडीन युक्त नमक खाने का प्रचार किया गया. . . .

■ स्वदेशी सम्वाद

यह सच है कि जब स्वदेशी जागरण मंच ने साधारण नमक पर लगे केंद्र सरकार के प्रतिबंध के विरुद्ध आंदोलन शुरु किया तो केंद्र ने कानूनी प्रतिबंध हटा लिया था लेकिन इससे कोई ठोस लाभ सामने नहीं आया। आयोडीनयुक्त नमक की बिक्री से अरबों की कमाई करने वाली देशी-विदेशी कंपनियों ने पैसे के जोर पर अपना कारोबार बना रखा है। आयोडीन लॉबी के शातिर लोगों ने एक ओर घूसखोर सरकारी चिकित्सकों को पैसे दे देकर देश का स्वास्थ्य ठीक करने के नाम पर उनके वक्तव्यों का सहारा लेते हैं तो दूसरी ओर प्रचार और विज्ञापन से भी लोगों के दिमाग को प्रभावित करने का काम करते हैं।

यह सबको पता है कि आयोडीनयुक्त नमक बेचने वाली कंपनियों का नमक वास्तविक नमक से अधिक सफेद और भुरभुरा होता है मगर यह नमक बरसात के दिनों में नमी खींचकर पसीजता नहीं है। जबकि साधारण नमक नमी खींचकर पसीज (पिघल) जाता है। ध्यान रहे कि जो नमक नमी नहीं खींचता, वह स्वास्थ्य के लिए लाभकारी नहीं होता। इसका वैज्ञानिक कारण यह है कि साधारण नमक में प्राकृतिक रूप से मैग्नेशियम आयोडाइड (Mgl2) पाया जाता है यह आयोडीन और मैग्नेशियम एक यौगिक है इसके नमक में रहने से नमक का रंग हल्का भूरा हो जाता है। इस यौगिक में प्राप्त होने वाला मैग्नेशियम नमी खींचता है। इसमें पाया जाने वाला आयोडीन शरीर में

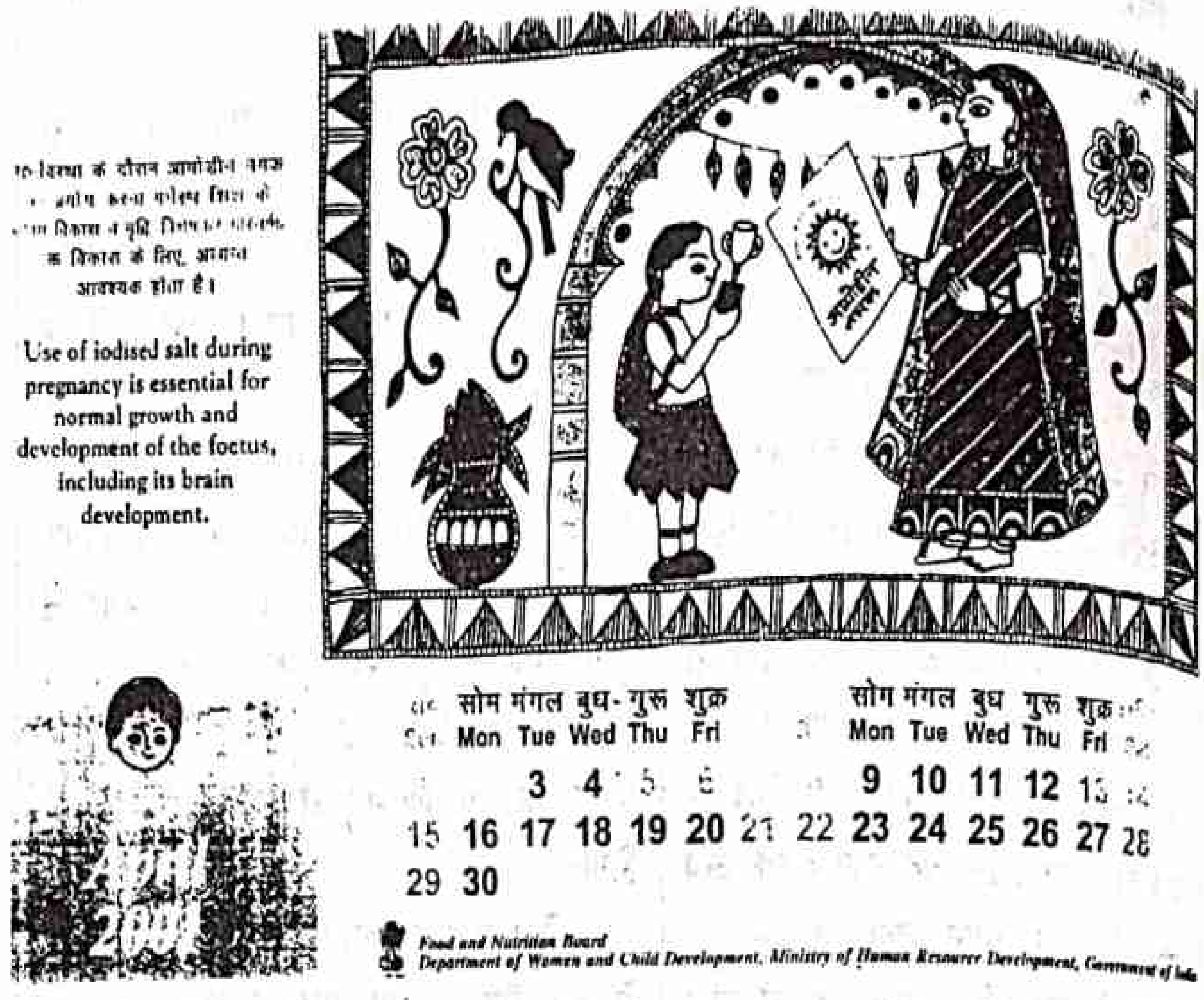

खाद्य एवं पोषण बोर्ड, भारत सरकार द्वारा जारी कैलेण्डर का वह पृष्ठ जिस पर बने चित्र और टिप्पणी में आयोडीनयुक्त नमक को गर्भस्थ शिशु के लिए लाभकारी बताया गया है। यह है विज्ञापन का व्यवसायिक षड्यंत्र में उपयोग का नमूना।

आयोडीन की पूर्ति करता है। मैग्नेशियम शरीर के लिए बहुत जरूरी तत्व है। यह हड्डी बनाने वाले तत्व कैल्शियम के साथ जुड़कर उसे ठोस और मजबूत बनाता है। कैल्शियम ईंट है और मैग्नेशियम गारा।

शरीर में जिस लेबल (स्तर) तक मैग्नेशियम रहता है उसी स्तर तक शरीर में कैल्शियम रहता है। मैग्नेशियम के स्तर के गिरते ही कैल्शियम का स्तर भी गिर जाता है। मैग्नेशिय के अभाव में हड्डी का कैल्शियम टूटने लगता है हड्डी में छेद होने और कमजोर होकर टूट जाने की बीमारी इसी से होती है।

सोचने की बात है कि जो नमक आयोडीनयुक्त होने को दावे के साथ बड़ी कंपनियाँ शोर मचा कर लोगों को खाने के लिए विवश कर रहीं है, उस नमक से प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला मैग्नेशियम आयोडाइट (Mgl2) निकाल लिया गया है। इसका प्रमाण है नमक द्वारा नमी नहीं खींचना, उसकी सफेदी और भुरभुरापन (फ्रीफ्लोइंग)। आयोडीनयुक्त नमक बनाने वालों को वास्तविक नमक से प्राकृतिक आयोडीन गायब करना भी एक सामाजिक अपराध है। मैग्नेशिय आयोडाइट (Mgl2) में आयोडीन के दो अणु होते है।

स्पष्ट है कि बड़ी कंपनियों के तथाकथित आयोडीनयुक्त नमक स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। इस कोढ में खाज यह भी है कि फूड एण्ड न्यूट्रिशन बोर्ड भारत सरकार से जारी किए गए एक कैलेण्डर में गर्भावस्था में आयोडीन युक्त नमक खाने का प्रचार किया गया ऐसी दशा में जब गर्भ में पलने वाले बच्चे की हड्डियाँ बन रहीं होती हैं। यदि इस षड्यंत्र में शामिल सरकारी तंत्र, स्वास्थ्य अधिकारी और व्यवसायी लाभ उठाते रहे और देश की वंश बेलि विकलांग और रोगी पैदा होती चली गई तो यह अपराध का सप्रमाण सामने आएगा और इस पाप दण्ड उन जिम्मेदार बने लोगों का पीछा करेगा जिन्होंने प्रलोभन में जनजीवन की हानि की है। ■

Scanned with OKEN Scanner

विश्व व्यापार संगठन के साथ हुई संधि पर जनमत संग्रह हो

■ डॉ. भरत झुनझुनवाला

> आयोग ने ध्यान दिलाया कि हमारे संविधान की धारा २४६ के अन्तर्गत अंतर्राष्ट्रीय संधि के सम्बंध में कानून बनाने का अधिकार संसद को है। परन्तु यदि संसद इस दिशा में कोई कानून न बनाये तो धारा ७३ के अनुसार वे अधिकार कार्यपालिका को हस्तान्तरित हो जाते हैं।

संविधान समीक्षा आयोग ने सुझाव दिया है कि विश्व व्यापार संगठन जैसी संधि का कार्यान्वयन संसद की संहमति के बाद ही किया जाना चाहिये। आयोग का सुझाव सही दिशा में है, परन्तु समस्या यह है कि संसद अपने इस उतरदायित्व का निर्वाह करने में पहले ही विफल रही है। फेल हो चुके छात्र को पुनः उसी कक्षा में भेजने से विशेष लाभ नहीं होता है। आवश्यकता इस बात की है कि महत्वपूर्ण संधियों पर देश की जनता का सीधा जनमत संग्रह कराया जाय। वर्तमान संसदीय प्रणाली लोकतंत्र नही बल्कि पार्टीतंत्र है। जनता को सीधे अपनी बात कहने का अवसर मिलना चाहिये।

आयोग ने ध्यान दिलाया कि हमारे संविधान की धारा २४६ के अन्तर्गत अंतर्राष्ट्रीय संधि के संबन्ध में कानून बनाने का अधिकार संसद को है। परन्तु यदि संसद इस दिशा में कोई कानून न बनाये तो धारा ७३ के अनुसार वे अधिकार कार्य पालिका को हस्तान्तरित हो जाते हैं। इसी स्थिति का लाभ उठाते हुये हमारी सरकार ने संसद की सहमति प्राप्त किये बिना विश्व व्यापार संधि पर हस्ताक्षर कर दिये थे। देश के करोड़ों किसानों, श्रमिकों एवं उद्यमियों के भविष्य का निर्णय जनता द्वारा चुने गये सांसदों द्वारा नहीं बल्कि कार्यपालिका द्वारा ले लिया गया। आयोग ने विशेष ध्यान दिलाया है कि इस संधि के कारण पेटेंट कानून में संशोधन तथा सस्ते विदेशी माल के आयात से आम जनता पर भारी दुष्प्रभाव पड़ सकता है। एक ओर संसद अपने अधिकारों को कार्यान्वित नहीं कर रही है और मूक दृष्टा बन कर बैठी हुयी है और दूसरी ओर कार्यपालिका जनता के साथ मनमानी कर रही है।

इस स्थिति से निबटने के लिये आयोग ने सुझाव दिया है कि एक संसदीय कमेटी गठित कर दी जाय जो हर संधि का अध्ययन करे। मसौदे को देखते हुये यह तय करे कि संधि को (क) संसद के समक्ष सूचनार्थ रखा जाय; (ख) हस्ताक्षर के बाद संसद से पुष्टि कराकर ही उसे लागू किया जाय; अथवा (ग) बातचीत के दौरान ही संसद का मार्गदर्शन प्राप्त किया जाय। आयोग का कहना है कि ऐसा करने से कार्यपालिका की मनमानी नियन्त्रित हो जायेगी। विश्व व्यापार जैसी संधियों पर संसद को अवसर प्राप्त होगा कि वह कार्यपालिका का मार्ग दर्शन कर सके।

इस संदर्भ में आयोग ने दूसरे देशों के उदाहरण दिये हैं। आस्ट्रेलिया में यह व्यवस्था है कि संधि पर हस्ताक्षर करने के बाद मसौदे को बारह दिन तक संसद के पटल पर रखा जाता है। इस अवधि में संसद उचित निर्देश दे सकता है। इस अवधि के बाद ही संधि लागू होती है। फ्रांस में संधि पर हस्ताक्षर करने का अधिकार राष्ट्रपति को है। लेकिन, कुछ महत्वपूर्ण संधियों को संसद के समक्ष रखा जाना अनिवार्य होता है। संसद उन्हें नामंजूर कर सकती है। अमेरिका में संधि की सीनेट द्वारा पुष्टि (रैटिफिकेशन) अनिवार्य होती है। दो महतवपूर्ण अवसरों पर सीनेट ने कार्यपालिका द्वारा प्रस्तुत संधियों को स्वीकार नहीं किया था। प्रथम विश्व युद्ध के बाद अमरीकी राष्ट्रपति द्वारा वर्सेलीज संधि को सीनेट ने अस्वीकार कर दिया था और कार्यपालिका को सीनेट का निर्णय मानना पड़ा था। वर्तमान में सी.टी.बी.टी संधि को भी सीनेट की मान्यता नहीं मिली है।

उपरोक्त के विपरीत हमारी व्यवस्था इंगलैण्ड तथा कानाडा जैसी है। इन देशों में संधि करने का अधिकार कार्यपालिका को है। यह व्यवस्था अवश्य है कि कार्यपालिका द्वारा की गयी संधि के कारण संसद द्वारा बनाये गये कानून अमान्य नहीं हो जाते हैं। उदाहरण स्वरूप हमारी कार्यपालिका ने विश्व व्यापार संधि के अन्तर्गत अपने पेटेंट कानून बदलना स्वीकार किया था। परन्तु कार्यपालिका के हस्ताक्षर मात्र से वे कानून बदले नहीं। सरकार को संसद के समक्ष पेटेंट कानून बदलने के लिये एक बिल लाना पड़ा था।

आयोग ने यह सुझाव दिया है कि हम इंगलैण्ड की पद्धति को त्याग कर अमरीकी पद्धति स्वीकार करें। अर्थात्

Scanned with OKEN Scanner

कार्यपालिका को संधि करने की जो वर्तमान स्वतंत्रता है उसे सीमित कर दें तथा एक संसदीय कमेटी की निगरानी में ही संधि की जायें। ऐसा करने से कार्यपालिका जनता को साथ लिये बिना महत्वपूर्ण संधियों पर मनमाना नहीं कर सकेगी।

आयोग की संवेदना स्वागत योग्य है। निश्चय ही जनप्रतिनिधियों को महत्वपूर्ण संधियों पर दखल करने का अवसर मिलना चाहिये। लेकिन मुख्य समस्या यह नहीं है। संसद को दखल करने का अधिकार तो संविधान की धारा २४६ के अन्तर्गत पहले से ही उपलब्ध है। समस्या यह है कि संसद स्वयं अकर्मण्य हो चली है। संसद की अकर्मण्यता को संसद की ही एक कमेटी बनाकर दूर नहीं किया जा सकता है। यदि संसद चाहती तो विश्व व्यापार संधि पर उपयुक्त कानून बनाकर कार्यपालिका को निर्देश दे सकती थी। परन्तु संसद मूक दृष्टा बनकर बैठी रही और कार्यपालिका मनमाना करती रही। आयोग ने स्वयं बताया कि १९९३ में उस समय प्रस्तावित ट्रिप्स समझौते को संसद की एक स्टैंडिंग कमेटी के समक्ष रखा गया था। कमेटी ने ट्रिप्स संधि पर हस्ताक्षर न करने की हिदायत दी थी। परन्तु संसद ने उसी ट्रिप्स संधि के अनुरूप अपनी ही स्टैन्डिंग कमेटी के सुझाव को अनदेखा करते हुये देश के पेटेन्ट कानून को बाद में संशोधित कर दिया है। इससे स्पष्ट होता है कि जब संसद स्वयं अपने दायित्व को न निभाये तो कमेटी बनाने से विशेष लाभ नहीं हो सकता है। मूल समस्या कार्य पालिका के अधिकारों अथवा मनमानी की नहीं बल्कि संसद की अप्रासंगिकता की है। वास्तव में हम जिसे लोकतंत्र कहते हैं वह पार्टीतंत्र है। हमारे सांसद न ही विवेक से चर्चा करते हैं और न ही मतदान। उनके समक्ष मुख्य मुद्दा यह होता है कि अगले चुनाव में उन्हें टिकट मिल जाय। इसलिये वे पार्टी के नेताओं के इशारे पर कार्य करते हैं। दूसरी समस्या वि.ह.प की है। हमारे कानून में व्यवस्था है कि पार्टी अध्यक्ष सांसदों को किसी भी मुद्दे पर किसी एक पक्ष में मत डालने के लिये कानूनन मजबूर कर सकते हैं। यदि कोई सांसद विश्व व्यापार संधि पर अपनी पार्टी तथा सरकार से सहमत नहीं है तो भी उसे पार्टी के निर्देशानुसार मत डालना ही होगा। संसद पर वास्तव में नियंत्रण पार्टी के अध्यक्षों का है। सांसद तो मात्र पार्टी के अध्यक्ष के नुमाइंदे हैं। जनता अथवा जनप्रतिनिधियों को किसी विषय विशेष पर अपनी बात कहने का अधिकार ही नहीं है। जनता का अधिकार मात्र इतना है कि वह एक पार्टी अध्यक्ष के स्थान पर दूसरे पार्टी अध्यक्ष को अधिकार सौंप सकती है।

ऐसी स्थिति में संसदीय कमेटी बनाने अथवा न बनाने से कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। जिन पार्टी अध्यक्षों की सहमति से कार्यपालिका किसी अप्रिय संधि पर हस्ताक्षर करती है उन्हीं पार्टी अध्यक्षों के निर्देशानुसार हमारे सांसद मतदान करने को बाध्य हैं। यही कारण है कि ट्रिप्स पर संसद की स्टैन्डिंग कमेटी द्वारा प्रतिकूल टिप्पणी के बावजूद वह कानून संधि के अनुरूप संशोधित कर दिया गया। जो समस्या संधि के विषय में है वही तमाम अन्य विषयों में भी है। आज देश में आम आदमी को न्याय उपलब्ध नहीं है। सरकारी कर्मचारी काम नहीं करते हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हित में हजारों रोजगारों की बलि चढ़ाना आम बात हो गई है। छुद्र आर्थिक लाभ को अर्जित करने के लालच में विदेशी टेलीविजन भोगवादी संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं। कुछ उच्चवर्गीय वायुयान यात्रियों की जान बचाने के लिये आतंकवादियों की रिहाई की जा रही है जो हजारों साधारण व्यक्तियों की जान ले रहे हैं। हमारी सरकार अनेक स्थानों पर जन विरोधी व्यवहार कर रही है। संसद एवं संसदीय कमेटियाँ इस समस्या का समाधान करने में विफल हो रही हैं। इसका कारण यह है कि वर्तमान लोकतंत्र में जनता को हर पाँच वर्ष के बाद दो पार्टी अध्यक्षों के बीच चयन करने का अधिकार प्राप्त होता है। सभी पार्टी अध्यक्षों के अपने अपने स्वार्थ होते हैं। वे भी कार्यपालिका से मिलकर पार्टी के काम कराने में लगे रहते हैं। कार्यपालिका से विरोध कोई नहीं करना चाहता है। इस मूल समस्या का निदान तब ही होगा जब जनता को और अधिक शक्ति प्रदान की जाय। जनता चेतन है जनता को अधिकार होना चाहिये कि वह कानून व्यवस्था, रोजगार, टेलीविजन, संस्कृति, विश्वव्यापार संधि आदि अनेक विषयों पर अपना मत सीधे दे सके। जनता को यह कहने का अधिकार होना चाहिये कि ट्रिप्स समझौता उसे स्वीकार है या नहीं। उसे सस्ती दवा चाहिये या उच्च ... की हृदय सर्जरी। संसद की अकर्मण्यता जनता ही नियन्त्रित कर सकती है।

आयोग को अनिवार्य वार्षिक जन संग्रह पर विचार करना चाहिये। संविधान यह व्यवस्था की जा सकती है कि प्रत्येक किसी एक विषय पर जनमत संग्रह (रिफरें कराया जायेगा। जनमत संग्रह का विषय वि द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिये। विपक्ष छूट होनी चाहिये कि वह ट्रिप्स समझौते जनमत संग्रह कराने का निर्णय करे। जनता को ट्रिप्स पसन्द नहीं होगा तो ज सरकार को मजबूर कर देगी कि व उस पर समझौता न करे। साथ ही यह व्यवस्था की जा सकती है कि सरकार पूरे पाँच वर्ष कार्यकाल पूर्ण करे। इससे सरकार पर ज का दबाव भी बनेगा और सरकार

आज देश में आम आदमी को न्याय उपलब्ध नहीं है। सरकारी कर्मचारी काम नहीं करते हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हित में हजारों रोजगारों की बलि चढ़ाना आम बात हो गई है। छुद्र आर्थिक लाभ को अर्जित करने के लालच में विदेशी टेलीविजन भोगवादी संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं। कुछ उच्चवर्गीय वायुयान यात्रियों की जान बचाने के लिये आतंकवादियों की रिहाई की जा रही है जो हजारों साधारण व्यक्तियों की जान ले रहे हैं।

आवश्यक कठोर कदम उठाने का मौका मिल सकेगा। यह स्पष्ट होना चाहिये कि सं पर नियंत्रण संसद की कमेटी का नहीं ब जनता का ही हो सकता है।

ध्यान देने योग्य है कि स्विटजरलै में वर्तमान में ऐसी व्यवस्था लागू है। व संसद के दोनों सदन एक साथ सदस्य कमेटी निर्वाचित करते हैं। यह कमेटी करती है कि किन संधियों को सीधे ल किया जाय, किन्हें संसद की स्वीकृति के ब और किन पर जनमत संग्रह कराया जा कुछ विशेष प्रकार की संधियों पर जन संग्रह अनिवार्य है। हमें इसी आधार अपने संविधान में संशोधन करना चाहि जनमत संग्रह को केन्द्र में रखना चाहि जिससे जनता को अपनी आवाज पार्टियों माध्यम से नहीं बल्कि सीधे कहने का अवस मिले। ध्यान रखना चाहिये कि १०,००० करो का खर्च जो ऐसे जनमत संग्रह में व्यय हो वह जनता को मिले लाभ की तुलना नगण्य होगा। ■

Scanned with OKEN Scanner

किसानों की तबाही : अँग्रेजों के काले कानून

■ विनोद कुमार दुबे*

न्यायालयों में मुकदमों की परेशान कर देने वाली भीड़ एक ओर न्यायपालिका का सिरदर्द है दूसरी ओर न्याय व्यवस्था का दोष भी, इससे मुक्ति के प्रयास हो रहें है। अंग्रेजी शासन में न्याय की यह उलझाऊ व्यवस्था बनी थी ताकि अधिक से अधिक लोग परेशानी में पड़े रहें, सत्ता की ओर जनता का ध्यान न जाए और स्वतंत्रता के बाद भी यह रोग बनाए रखा गया। आज नए सिरे से पुनः कृषि से संबंधित कानून बहुराष्ट्रीय कंपनियों को स्थान देने के लिए भी बन रहे हैं।

न्यायालयों में मुकदमों की परेशान कर देने वाली भीड़ एक ओर न्यायपालिका का सिरदर्द है दूसरी ओर न्याय व्यवस्था का दोष भी, इससे मुक्ति के प्रयास हो रहें है। अंग्रेजी शासन में न्याय की यह उलझाऊ व्यवस्था बनी थी ताकि अधिक से अधिक लोग परेशानी में पड़े रहें, सत्ता की ओर जनता का ध्यान न जाए और स्वतंत्रता के बाद भी यह रोग बनाए रखा गया। आज नए सिरे से पुनः कृषि से संबंधित कानून बहुराष्ट्रीय कंपनियों को स्थान देने के लिए भी बन रहे हैं। सारी खोटें पहले कानून में ही गढ़ी जाती है। इसलिए इनकी जानकारी जरूरी है।

विदेशी शासकों द्वारा निर्मित एवं पोषित कानूनों को अब और अधिक दिनों तक अपने देश में चलते रहने देना घातक है। ये कानून राष्ट्र को एवं विशेष रूप से देश के किसानों को कंगाली के गर्त में पहुंचाने का रास्ता बनते रहे है।

कानूनों के पेंचीदापन के कारण ग्रामों में अवस्थित हर छोटे-बड़े चौराहों से एक-एक जिले के मुख्यालयों में अवस्थित न्यायालयों में किसानों को ढोने हेतु सैकड़ों जीपों एवं बसों को चलाना पड़ता है। जिस पेट्रोलियम पदार्थों का प्रयोग, अपने पैसों का प्रयोग, अपने समय का प्रयोग किसान अपने खेतों में करता, देश में अत्यधिक उन्नत खेती से, देश को समृद्ध करता एवं प्रदूषण रहित वातावरण बनता। जिससे देश में झगड़े का फैलाव खत्म हो उन्नत वातावरण बनता, वह किसानों को न्यायालय में ढोने में लगा है। यही विदेशी शासक चाहते भी थे कि देश का अधिकांश किसान न्यायालय में उलझे रहे और उनके शासन में व्यवधान न हो और साथ ही भूमि सुधार के कानूनों के नाम पर किसानों को आपस में उलझाकर रख दिया है, जिससे लगता है कि आज भी किसानों को पीड़ा पहुँचाकर अंग्रेज शासकों के तरह कानून निर्माता परितुष्टि हासिल कर रहे हैं। जिससे खेत एवं किसान फटेहाली के निम्नतम अवस्था में है और अपने संतानों को नौकरी की तरफ शहर भेजना ज्यादा पसंद करते है।

कुछ कानूनी तथ्य उदाहरणार्थ

प्रतिकूल कब्जे का कानून – इस कानून का मुख्य धारणाएं हैं –

(१) संपत्ति को उस व्यक्ति द्वारा कब्जा कर लेना, जिस सम्पत्ति पर कब्जा करने का अधिकार नहीं है।

(२) सम्पत्ति के वास्तविक मालिक के प्रतिकूल (जबरन) कब्जा होना।

(३) अतिचारी द्वारा प्रतिकूल कब्जा।

उपरोक्त जबरन कब्जे के कानून को देश में रहने देने एवं उसके धारणा से स्पष्ट होगा कि आज किसानों के चिंतक होने का प्रदर्शन मात्र कानून निर्माताओं का योग्य कार्य रह गया है। मनमानी द्वारा थोपे कानूनों का पोषण ही इनकी कार्य सूची है।

अतिचारी द्वारा जबरन (प्रतिकूल) कब्जा जिसे अंग्रेजी में एडवर्स पोजेशन कहा जाता है, का कानून – ''किसी व्यक्ति की

*लेखक व्यवहार न्याय (दीवानी कानून) के जाने-माने विशेषज्ञ अधिवक्ता हैं।

Scanned with OKEN Scanner

जमीन कोई अतिचारी जबरन १२ वर्षों तक कब्जा कर लें और जमीन वाला विरोध नहीं कर पाए, तो जमीन का अतिचारी द्वारा किया गया कब्जा वैद्य घोषित कर दिया जाएगा'' और अतिचारो का जमीन पर अधिकार हो जाएगा।

कमजोर किसान, आर्थिक रूप से जर्ज किसान, मजबूत अतिचारी के प्रतिकूल कब्जे या जाली साबूतों के आधार पर सिद्ध किए गए कब्जेवारी का समुचित उत्तर नहीं दे पाता है एवं न्यायालय का निर्णय अपने विरुद्ध पाता है। स्वाभाविक अधिकार से वंचित हो जाता है।

इस प्रकार के कानून बनाने वालों के दिमाग में चाहे जो भी भावना रही हो, विदेशी शासकों के समय से ही और आज भी आतंक बाद का पर्याय ही एडवर्स पोजेशन का कानून है और जब तक यह कानून रहेगा, कोई जमीन का मूल कास्तकार चैन से नहीं रहेगा। यह कानून किसी किसान को न जीने देता है, न मरने देता है।

प्राकृतिक न्याय के अनुसार होना यह चाहिए कि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति की जमीन को चाहे जितने दिनों से भी कब्जा कर लिया हो, उसका अधिकार जबरन किए हुए कब्जे के आधार पर कानूनी वैधता प्राप्त न हो बल्कि जबरन कब्जा सिद्ध किए गए समय का हर्जाना वसूल हो। इस एक कानून को सुधारने से या पूर्णतः हटाने से आधे मुकदमें निश्चित खत्म होंगे।

एक दूसरा कानून है – सिकमी का। यह कानून मूल रूप से अगर देखा जाए तो कास्तकारों द्वारा विभिन्न शर्तों पर अपनी जमीन को दूसरे व्यक्ति द्वारा खेती करने हेतु देने की प्रक्रिया रही है। लेकिन किसानों को आपस में उलझा देने के लिए कानून में परिवर्तन कर अंग्रेजों द्वारा ऐसी स्थिति पैदा की गई कि अगर एक बार किसी व्यक्ति द्वारा अपनी जमीन के माध्यम से खेती कराने की कोशिश की गई कि वह जमीन उस दूसरे व्यक्ति के जीवन भर जोत में रहेगी। इस कानून की दुखद रूप एवं आतंकी रूप सन १९३८ में तब उभर कर सामने आया जब इसमें पुनः संशोधन कर प्रावधान लाया गया कि अगर सिकमीदार १९३८ ई० तक जीवित है और उसके जोत में सिकमी के रूप में जमीन है तो वह जमीन उसे पुस्त दर पुस्त यानी वंशानुगत जोतने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा और हमारे किसानों के शुभ चिंतक वर्तमान आजादी के बाद के सरकारों ने तो विदेशी सरकारों के तर्ज पर और हद कर दी है और आज के काल में सिकमी का कानून परिवर्तित हो, सिर्फ इतना रह गया कि खेत पर निर्धारित सरकारी लगान के २४ गुना मूल कास्तकार यानी जमीन के मालिक को देकर कास्तकारी हक सिकमीदार प्राप्त कर लेगा। बिहार में इस कानून का लाभ उठाने की होड़ लगी है और सौ-पचास रूपयों में मूल कास्तकारों की जमीन पर से अधिकार समाप्त कर दिया जा रहा है। अगर वर्तमान देशी सरकारों को मूल कास्तकारों की जमीन छीन कर सिकमीदारों को देनी ही है तो जमीन का समुचित मुआवजा देकर सिकमीदारों को वितरीत कर देनी चाहिए थी। कानूनी भँवर जाल में किसानों को फँसाकर तथा मुकदमें में डाल कर एवं आपस में उलझाकर वर्षों तक निम्न न्यायालय से उच्चतम न्यायालयों तक मुकदमा बाजी करा कर किसानों को तबाह किया जा रहा है। स्पष्ट एवं सीधे स्वदेशी कानून का निर्माण न कर देश के किसानों के साथ घात होने में सहयोगील नहीं बनना चाहिए एवं कानून निर्माताओं को चाहिए कि खेतीहरों के पीड़ा से परितुष्टि हासिल न कर प्राकृतिक न्याय व्यवस्था की स्थापना करें। स्वदेशी कानून व्यवस्था से ही देश के किसानों का पीड़ा समाप्त होगा न कि विदेशी कानूनों को स्वदेशी रूप देने से। ■

> **कानून बनाने वालों के दिमाग में चाहे जो भी भावना रही हो, विदेशी शासकों के समय से ही और आज भी आतंक बाद का पर्याय ही एडवर्स पोजेशन का कानून है और जब तक यह कानून रहेगा, कोई जमीन का मूल कास्तकार चैन से नहीं रहेगा। यह कानून किसी किसान को न जीने देता है, न मरने देता है।**

उपग्रह प्रक्षेपण के विश्व बाजार में भारत का प्रवेश

भारतीय अंतरिक्ष वैज्ञानिकों ने १- अप्रैल की दोपहर ३.४३ बजे भूस्थिर उपग्रह प्रमोचक यान (जी एस एल वी) के पहले परीक्षण–उड़ान हुई। इस उड़ान की सफलता ने भारत को अभिजात (एलीट) अंतरिक्ष क्लब में शामिल करा दिया। १२५ करोड़ रुपए लागत से निर्मित ४६.१ मीटर ऊँचे इस रॉकेट ने भारत के प्रायोगिक उपग्रह जी सैट–१ को अंतरिक्ष में ३६,००० किमी की ऊँचाई तक पहुँचाकर विश्व में हमारी श्रेष्ठता प्रमाणित की। अंतरिक्ष बाजार में भारत अभी तक उपग्रह बनाने और उपग्रहों से प्राप्त आँकड़ों को बेचने के व्यवसाय तक सीमित था लेकिन अब अंतरिक्ष बाजार के ४७००० करोड़ रुपए यानी १० अरब डॉलर के वैश्विक व्यवसाय में भारत की व्यवसायिक हिस्सेदारी तय होगी। इसके पहले भी ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचक यान (पी एस एल वी) की पिछली उड़ान से दो विदेशी उपग्रहों को ८०० किमी की ऊँचाई वाली एल ई ओ में पहुँचाया गया था। अगली पी एस एल वी उड़ान से भी दो विदेशी उपग्रह प्रक्षेपित किए जाने वाले हैं।

भारतीय प्रक्षेपक सबसे सस्ते हैं। लेकिन इनसे अधिक कमाई के लिए इनकी क्षमता में बढ़ोत्तरी आवश्यक है। जी एस एल वी से २ टन तक के उपग्रह छोड़े जा सकते हैं। लेकिन वर्त्तमान में इससे २ टन से भारी उपग्रहों के प्रक्षेपण की अधिक माँग है।

भारत यूरोपीय संघ, रूस, अमरीका जैसी शक्तियों को अंतरिक्ष प्रक्षेपण बाजार में तभी टक्कर दे सकता है जब जी एस एल वी को इतना ताकतवर बनाए कि उससे ज्यादा वजन के उपग्रह छोड़े जा सकें और प्रक्षेपण खर्च भी उनकी तुलना कम हो। भारत में अंतरिक्ष कार्यक्रम का बजट वार्षिक ५०० लाख डॉलर का होता है, जबकि नासा १५ अरब डॉलर एवं एरियन (यूरोपीय संघ) ५ अरब डॉलर खर्च करता है। अतः भारत सरकार को इस व्यवसाय से लाभ लेने के लिए निवेशकों की आवश्यकता पड़ सकती है। ■

Scanned with OKEN Scanner

ममता के आँचल में पलता भविष्य

■ सुषमा शर्मा

किसी भी देश के भविष्य का उत्तरदायित्व उस देश की आने वाली पीढ़ी पर होता है। उस पीढ़ी का भविष्य उज्ज्वल हो इसके लिए जरूरी है कि, सामाजिक वातावरण, संस्कार, आचार-विचार में सुदृढ़ता हों। जब ये सारी चीजें किसी देश के नवयुवकों और नवयुवतियों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं तो परिणामस्वरूप उस देश का भविष्य निश्चित रूप से उज्ज्वल ही होगा।

परंतु आज भारतीय समाज धीरे-धीरे पतन की ओर चला जा रहा है क्योंकि आज की भाग-दौड़ की जिंदगी में परिवार टूटते जा रहे हैं। संयुक्त परिवार आज एकल परिवार के रूप में जन्म ले रहे हैं। जब संयुक्त परिवार एकल परिवार में बदलता जा रहा है तो ऐसी स्थिति में परिवारों के सदस्यों का मनोभाव भी परिवर्तित हो रहा है जिसका दुष्परिणाम नवजात शिशुओं पर पड़ता है। आज का एकल परिवार जिसमें पति-पत्नी के अलावा उनके बच्चे ही होते हैं यदि पत्नी और पति दोनों ही नौकरी-पेशे वाले है तो ऐसी स्थिति में सबसे बड़ी समस्या यह उत्पन्न होती है कि उनके नव-जात शिशुओं की किस तरह से देखभाल की जाए।

आज हमारे समाज में अभी भी कुछ ऐसे संयुक्त परिवार मौजूद है जहाँ पर शिशुओं का आसानी से पालन-पोषण होता आ रहा है। संयुक्त परिवार और एकल परिवारों का यदि तुलनात्मक रूप से अध्ययन किया जाए तो यही स्पष्ट होता है कि आज की भाग-दौड़ की जिंदगी में संयुक्त परिवार ही पूर्णरूप से बच्चों के पालन-पोषण की दृष्टि से सक्षम होते है। संयुक्त परिवार में पले-बड़े बच्चों को शारीरिक एवं मानसिक विकास उच्च स्तर का होता है जिससे उन बच्चों में सकारात्मक प्रवृत्तियाँ जन्म लेती हैं और उनके आचार-विचार और संस्कारों में सुदृढ़ता आती है। दूसरी ओर एकल परिवारों में जहाँ महिला वर्ग कामकाजी होती है वहाँ उन्हें अपने बच्चों के संरक्षण, पालन पोषण की समस्या आती है ऐसी स्थिति में ऐसी महिलाएँ विकल्प की तलाश करने लगती है।

आज समाज में इस प्रकार की संस्थाएँ निरंतर बढ़ती जा रही है जो कि ऐसे बच्चों की देखभाल के लिए अपनी पूरी-पूरी जिम्मेदारियाँ ले रही है। समाज में आज महिलाएँ ममता की तुलना आर्थिक दृष्टि से करती है। वे अपने बच्चों को वो प्यार दुलार, ममत्व और संरक्षण नहीं दे पा रही है जो कि बच्चों को अनिवार्य है। आज जगह-जगह बच्चों के लिए ऐसी संस्थाएँ उपलब्ध है जहाँ माताएँ बच्चों को छोड़कर कार्यालय चली जाती है। इन संस्थाओं को 'क्रेच' नाम से भी संबोधित किया जाता है। इन क्रेचों में बच्चों की परवरिश की जिम्मेदारी आयाओं के हाथों में होती है। जहाँ इन बच्चों की देखरेख औपचारिकताओं के साथ होती है जिसके कारण इन बच्चों की प्रवृत्तियों में अंतर आ जाता है और उनका शारीरिक और मानसिक विकास रुक जाता है। ऐसी परिस्थितियों में इन बच्चों में आक्रामक प्रवृत्तियाँ जन्म लेने लगती है।

आज प्रत्येक परिवार का यही उद्देश्य होता है कि उनके बच्चों में अच्छे संस्कार पैदा हों उनके आचार-विचार उनकी मानसिकता और शारीरिक सुदृढ़ता में निरंतर वृद्धि होती है। हर ममतामयी माँ की भी लालसा होती है कि उसका बच्चा बड़ा होकर वीर पुरुष कहलाएँ और देश में उनका नाम ऊँचा करें। परंतु इस प्रकार की अपेक्षाएँ यदि माताओं को अपनी संतानों से होती है तो इसके लिए यह भी जरूरी है कि उन बच्चों पर माँ का पूरा संरक्षण हो उसका वात्सल्य उनके बच्चों पर छलके तभी एक संस्कार वाले संतान की अपेक्षा की जाती है।

प्राचीन इतिहास में यदि माताओं की चर्चा करें तो जीजाबाई, यशोदा, कौशल्य ने भी वात्सल्य बिखरेने में कोई कमी नहीं छोड़ी थी उनके पूरे-पूरे दायित्व उनके पालन-पोषण की प्रवृत्ति के आधार पर ही उनके वीर पुत्रों ने इतिहास को गौरवशाली बनाया था।

हमारे देश में ऐसे अनाथालय भी है जहाँ बच्चों को अभिभावकों की कमी जीवन भर यूँ ही अकेले जीने पर मजबूर करती है। इन अनाथालयों से सैकड़ों की संख्या में छोटे-छोटे बच्चों को विदेशों के लिए भेजा जाता है। जहाँ पर उनसे अनेक प्रकार की प्रताड़नाओं का सामना करने जीवन व्यतीत करना पड़ता है। क्या कारण है हमारे समाज की आज ऐसी स्थिति आ गई है।

Scanned with OKEN Scanner

दूसरे देशों की चर्चा करें तो यह स्पष्ट होता है कि उन देशों में तो स्थिति और भी नाजुक है। अमरीका जैसे देश में एक करोड़ तीस लाख बच्चे ऐसे हैं जोकि चाइल्ड केयर सेंटर में ही रहते हैं। अमरीका के कुछ प्रतिशत बच्चे ऐसे है जिनमें परिवार का ही कोई एक सदस्य उसकी देखभाल करता है तथा पाँच प्रतिशत बच्चों की देखभाल आया द्वारा ही की जाती है। आँकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट है कि मात्र १/४ भाग ही ऐसा जो माता-पिता के संरक्षण में होता है। इस प्रकार की समस्या ऐसे देशों में और भी विकराल रूप लेती जा रही है। जिसका परिणाम यही होता है कि चाइल्ड केयर सेंटर में पलने वाले बच्चों को घरों में पलने वाले बच्चों की अपेक्षा ज्यादा आक्रामक प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती है वे इतने चिड़चिड़े हो जाते है कि वे अपने माता-पिता की बातों का भी विरोध करने लगते हैं।

छोटे बच्चों की देखरेख पर नेशनल इंस्टीट्यूड ऑफ चाइल्ड हेल्थ और ह्यूमन डेवेलपमेंट स्टडी से यह बात भी सामने आई है कि जो बच्चे हफ्ते में १० से ७६ घंटे चाइल्ड केयर में बिताते है वे बच्चे इन संस्थाओं में कम समय बिताने वाले बच्चों की तुलना में अधिक डरपोक, शर्मीले और उदास प्रवृत्ति के हो जाते है।

उपर्युक्त तथ्यों से यही स्पष्ट है कि बच्चों की देखरेख में माता-पिता का होना अति आवश्यक है क्योंकि उनके संरक्षण के अभाव में बच्चों के कई प्रकार की शारीरिक और मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती है जो कि एक स्वस्थ समाज को सक्षम बनाने में बाधक सिद्ध होती है। जब देश के बच्चे ही कमजोर और विकृतियाँ लिए होंगे तो हम एक उज्ज्वल भविष्य की कैसे कामना कर सकते हैं।

माता-पिता का बच्चों पर पूरी तरह से नियंत्रण हो यह जरूरी है परंतु इसका यह मतलब भी नहीं है कि ऐसे माता-पिता जो नौकरी पेशेवर है उन्हें अपना व्यवसाय छोड़ देना चाहिए परंतु इतना जरूर है कि उनको अपने बच्चों के भविष्य के प्रति सजग रहना चाहिए और समय-समय पर बात की भी जानकारी रखनी चाहिए कि इस प्रकार की संस्थाओं में उनके बच्चों की परवरिश भली-भाँति हो रही है अथवा नहीं। यदि नहीं है तो उनके पीछे क्या कारण है। क्योंकि आज ये बच्चे ही कल का भविष्य होंगे। ■

जीवाश्म ऊर्जा का उत्तम विकल्प : पवन ऊर्जा

■ धीप्रज्ञ द्विवेदी

ग्रीन पीस और पवन ऊर्जा विशेषज्ञो के अनुसार पृथ्वी पर पवन शक्ति जीवाश्म ऊर्जा का सार्थक विकल्प है। इनके एक संयुक्त सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार पवन ऊर्जा की वर्तमान ०.११ प्रतिशत क्षमता को बिना किसी नई तकनीक के १० प्रतिशत किया जा सकता।

वर्तमान परिवेश में जब अर्थसत्ता राजनीतिक एवं धार्मिक सत्ता पर हावी होने लगी है तो राष्ट्र की अर्थशक्ति उसे अन्तराष्ट्रीय परिदृश्य मे स्थापित करेगी। राष्ट्र की आर्थिक स्थिति उसके ऊर्जा स्रोतो के बिकास या दोहन के समानुपाती होती है।

आज जीवाश्म ईधनो के लगातार दोहन से उनके स्रोतों के समाप्त होने का खतरा सामने आ चुका है। वैज्ञानिको के अनुसार २०१० तक वर्तमान स्रोतो से उत्पादन चरम पर होगा और फिर उत्पादन में कमी शुरू हो जायेगी तो स्वाभाविक है कि हम उन जीवाश्म ईंधनों का विकल्प तलाश करें। इन विकल्पो में पवन बेहद महत्वपूर्ण है। यह सर्वाधिक पर्यावरण मित्र स्रोत है। आज के बेहद प्रदूषित वातावरण में भी यह बहुत उपयोगी है।

पवन की शक्ति का उपयोग कर हम बिजली का उत्पादन करते हैं। इसके लिये पवनचक्की का उपयोग किया जाता है। पवनचक्की का सिद्धान्त बच्चों की हवा से चलने वाली चरखी से निकला हैं। पवनचक्की में एक टावर पर कुछ हल्के पंखे लगे होते हैं। ये पंखे हवा के बहाव के अनुसार चलते हैं और उनके चलने से इनसे शाफ्ट के जरिये जुड़ा टरबाइन चलता है जिससे विद्युत ऊर्जा पैदा होती है। पवनचक्की से जल का आरहण एवं वितरण भी किया जाता है। पवन से उत्पादित शक्ति उसकी गति से तीन गुना होती है।

पवन ऊर्जा का उपयोग शताब्दियों से हो रहा है। चीन मे १३वीं शताब्दी में इसके उपयोग का प्रमाण मिलता है। आज विश्व में पवन ऊर्जा की कुल स्थापित क्षमता ४०,००० मेगावाट है। भारत में अभी केवल १०८० मेगावाट उत्पादन की क्षमता है जिसे २००५ तक २००० मेगावाट तक बढ़ाने की आशा की जाती है।

भारत में पवन ऊर्जा के उत्पादन की असीम सम्भावनीय है। विशेषज्ञों के अनुसार केवल भारत में लगभग ४५,००० मेगावाट पवन विद्युत उत्पादन की क्षमता निहित है। अपारम्परिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय ने पूरे देश में १० प्रदेशों के ८० क्षेत्रों में पवन ऊर्जा की क्षमताओ का पता लगाया है। वर्त्तमान में बिजली उत्पादन के लिये पवन फार्मो की स्थापना गुजरात के कच्छ, ओखा, भावनगर, राजकोट, तमिलनाडु के तूतीकोरीन, उड़ीसा में पुरी और महाराष्ट्र में देवगढ़-दहानू में ८५३ एकड़ भूमि की सिंचाई पवन चक्कियो द्वारा की जाती है।

भारत में इसके लिये अनुसंधान बहुत पहले (१९५२) से ही हो रहा है। फिर भी अभी तक पूर्ण स्वदेशी तकनीक विकसित नही हो पायी है। इससे जुड़ा उद्योग १५०० करोड़ रूपये से अधिक का वार्षिक कारोबार कर रहा है।

वैज्ञानिको का मानना है कि देश में पवनशक्ति की अगणित उपलब्ध्यता रेगिस्तानी क्षेत्रों में उपलब्ध है। जहाँ तेज हवाये हमेशा चलती रहती है। इस क्षेत्रों में पवन चक्कियो का उपयोग बिजली के साथ-साथ जल आरहण के लिये भी किया जा सकता है और पर्यावरणीय परिदृश्य बदला जा सकता है।

ग्रीन पीस और पवन ऊर्जा विशेषज्ञो के अनुसार पृथ्वी पर पवन शक्ति जीवाश्म ऊर्जा का सार्थक विकल्प है। इनके एक संयुक्त सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार पवन ऊर्जा की वर्तमान ०.११ प्रतिशत क्षमता को बिना किसी नई तकनीक के १० प्रतिशत किया जा सकता। यदि ऐसा किया गया तो जीवाश्म ऊर्जास्रोतो के क्षरण में प्रतिवर्ष २३.२ करोड़ टन की कमी की जा सकती है। रिपोर्ट में अमेरिका, डेनमार्क (पहले दो सर्वाधिक पवन ऊर्जा उत्पादक देश) एवं भारत का विशेष उल्लेख करते हुये इन देशों में पवन ऊर्जा की असीम संभावनाओं की आशा व्यक्त की गई है। ■

Scanned with OKEN Scanner

संस्कृत और संस्कृति-प्रक्रिया

■ डॉ. प्रमोदकुमार दुबे

विज्ञान के रास्ते बढ़ते जाने वाला वर्तमान विश्व अभी अब इस अवस्था में आ रहा है जब उसे भारत की संचित ज्ञान राशि से सम्वाद हो पा रहा है। इलैक्ट्रोनिक तरंगों के संजाल का विषय जिस मस्तिष्क में नहीं होगा, वह छंदों का गणित और ध्वनियों की ज्यामिति क्या समझेगा। भारतीय ज्ञान की लोकोत्तर भूमि तो अब प्रासंगिक हो रही है। संस्कार तंतुओं से निर्मित होने वाली भारतीय संस्कृति की वैश्विक भूमिका का आरंभ अब हो रहा है, संस्कृत अपनी पूरी सत्ता में प्रतिष्ठित होने जा रही है इससे हमारी संस्कृति भी अपना स्वरूप निर्धारित कर सकेगी।

महामहोपाध्याय गोपीनाथ कविराज का कथन है कि 'संस्कृत से जो भाषा जितनी ही विच्छिन्न होगी, वह भारतीय संस्कृति के केंद्र से उतनी ही हटती जाएगी। प्रादेशिक भाषा का आदर सर्वत्र नहीं होता, क्योंकि एक स्थान की भाषा दूसरे स्थान में व्यवहार योग्य नहीं होती। इसलिए एकमात्र संस्कृत वाङ्मय ही भारतीय संस्कृति के वाहन रूप में अपने को उद्भाषित कर सकता है। प्रत्येक प्रदेश ने प्राचीन समय से ही इस वाङ्मय की उन्नति के लिए न्यूनाधिक चेष्टा की है। व्यापक दृष्टि से देखने पर कहा जा सकता है कि अति प्राचीन काल से वर्तमान काल तक सभी प्रदेश देशगत भेद रहते हुए भी संस्कृत भाषा की उन्नति के लिए उद्यम करते आ रहे है' – (प्रस्तावना, काशी की सारस्वत साधना)।

इस कथन से स्पष्ट होता है कि संस्कृत भारत की सर्वस्वीकृत केन्द्रीय भाषा रही है इसमें सभी प्रादेशिक भाषाओं के विद्वानों का योगदान रहा है। संस्कृत का भाषा-जगत जिस संस्कृति का राष्ट्रव्यापी संचार करता रहा है वही हमारे राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना है। संस्कृत की उपेक्षा से ही राष्ट्र की एकात्मकता दुर्बल हुई है।

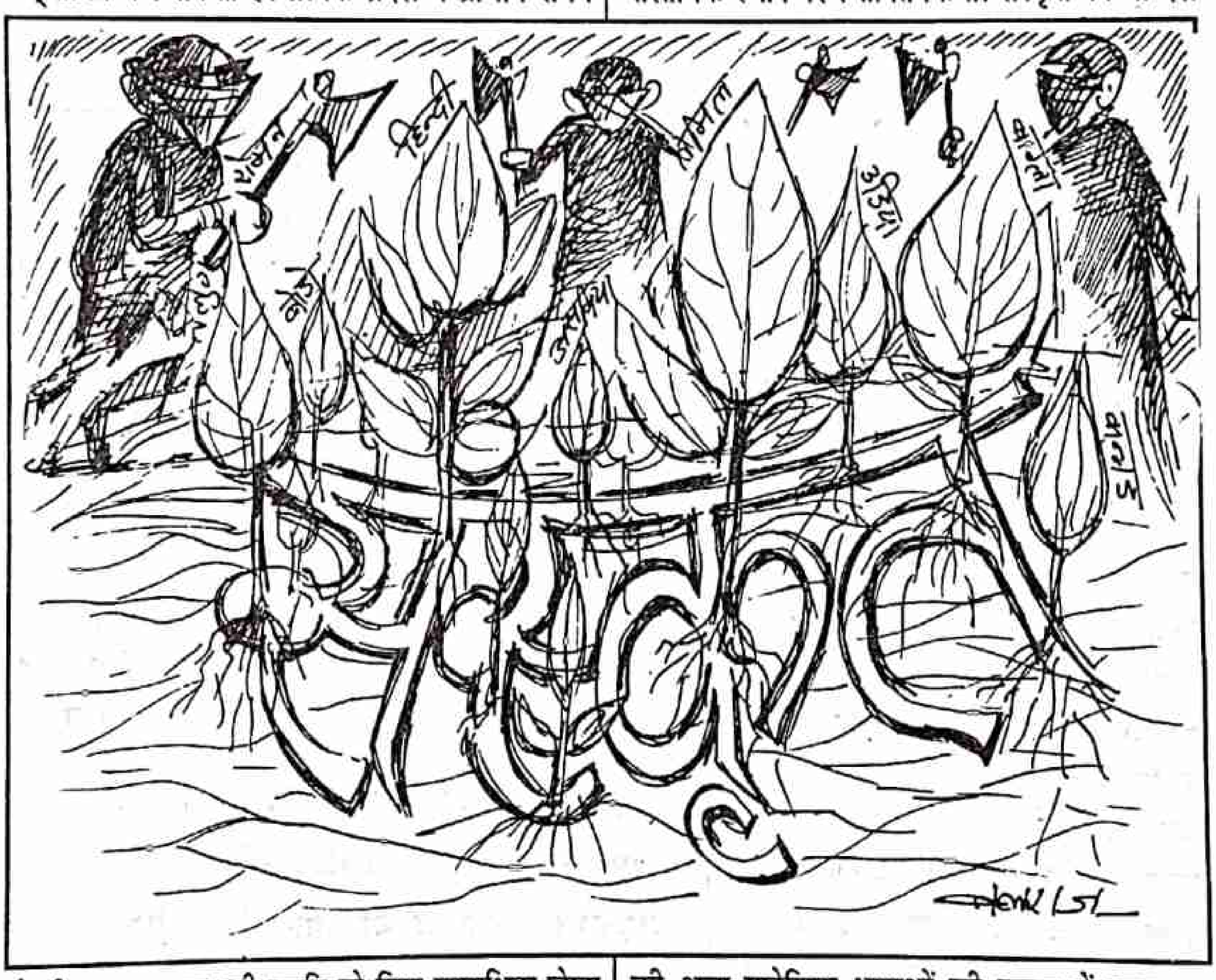

इस उपेक्षा का कारण है भारत की पराधीनता। देश की पराधीनता का उत्तराधिकार जिन हाथों को स्वतंत्रता के नाम से प्राप्त हुआ, उन हाथों ने भी संस्कृत की सत्ता को ठीक से नहीं समझा और न इसे इसके वास्तविक स्थान पर स्थापित किया। संस्कृत को भी देश की अन्य प्रादेशिक भाषाओं की कतार में खड़ा कर दिया गया। प्रादेशिक भाषाओं के पास अपनी राजनीति की जमीनें रहीं हैं। आक्रमणकारियों के संसर्ग से प्रचलित हुई भाषाओं में अंग्रेजी, अरबी, फारसी और हिन्दी के सम्मिश्रण से बनी उर्दू भाषा भी अनुकूल समय और सुविधाओं में फलीभूत होती रही हैं। जब स्वतंत्रता के संघर्ष में राष्ट्रव्यापी एक भाषा की आवश्यकता अनुभूति गई, इस के लिए हिंदी आगे आई, एक सीमा तक यह स्वतंत्रता का पर्याय भी बनी। इसमें राष्ट्रीय संस्कृति के प्रतिनिधि साहित्य की रचनाएं भी हुई,

Scanned with OKEN Scanner

जिनका आधार संस्कृत की संचित बौद्धिक सम्पदा ही थी। संस्कृत की बौद्धिक सम्पदा पर सभी क्षेत्रीय भाषाओं का एक समान अधिकार रहा है। इस सम्पदा के दोहन से क्षेत्रीय भाषाएँ समृद्ध हुई। यह तथ्य संस्कृत से लोक भाषाओं के गहरे संबंध का परिचायक है। संस्कृत के निर्माण में भी सभी लोक भाषाओं के शब्दों का समायोजन हुआ है, यही संस्कृत के राष्ट्रव्यापी व्यक्तित्व का कारण है।

स्वतंत्रता मिलने के बाद देश में विद्यमान विदेशी शक्तियों ने प्रादेशिक भाषाओं के सश्लिष्ट द्वंद्व को प्रेरित किया। उन्होंने हिंदी को भी एक प्रादेशिक भाषा के रूप घोषित किया और यह बताया कि हिन्दी अन्य भाषाओं के अस्तित्व को खतरे में डाल सकती है। वास्तविकता यह है कि हिन्दी के पास निजी आंचलिक तत्वों का अभाव है। यदि इसमें आंचलिक वर्णन किए जाते हैं तो इसका मूल स्वरूप वर्णित अंचल की विशेषताओं को ग्रहण कर एक अलग रूप ले लेता है। हिन्दी को आंचलिक बिरासतों से जुड़ते देख कहना पड़ेगा कि यह अमुक अंचल की हिंदी हो गई है। यदि यह भाषा किसी विशेष अंदाज की ही होती तो इसके पास दूसरे अंचल की विशेषताओं को सहन करने की क्षमता नहीं होती। हिन्दी को क्षेत्रीयता प्रदान करने के पीछे षड्यंत्र यह था कि इसका विरोध जारी रहे और अंग्रेजी का राज बना रहे। अंग्रेजी की भाषाई दुनिया फलती-फूलती रहे। इससे राष्ट्र की समग्र संस्कृति का सम्बर्द्धन समुचित ढंग से नहीं हुआ। क्षेत्रीय संस्कृतियों का आग्रह दिनानुदिन बढ़ता चला गया। आपस में परायापन तीव्र गति से बढ़ा।

आज देश में अलगाववादी ताकतों ने हर ओर सिर उठना शुरु कर दिया है, आतंक की काली छाया हर दिशा में मड़रा रही है तो इसलिए कि राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना का सम्बर्द्धन अवरुद्ध हो गया है। इस कार्य में बार-बार बाधाएँ खड़ी की जा रही हैं, ताकि भारतवासियों में एक राष्ट्र होने का भाव नहीं जगे। एक राष्ट्रीय संस्कृति का बोध नहीं उदित हो। इसके लिए राष्ट्र विरोधी शक्तियाँ हत्या करने पर भी उतारू हो रही हैं। असम में बोड़ो साहित्य सभा के अध्यक्ष बिनेश्वर ब्रह्म की १७ अगस्त २००० ई० को हुई हत्या राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना के विरोधी ताकतों का ही पाप है। देश द्रोही ताकतें नहीं चाहती हैं कि बोड़ो भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाए। इन

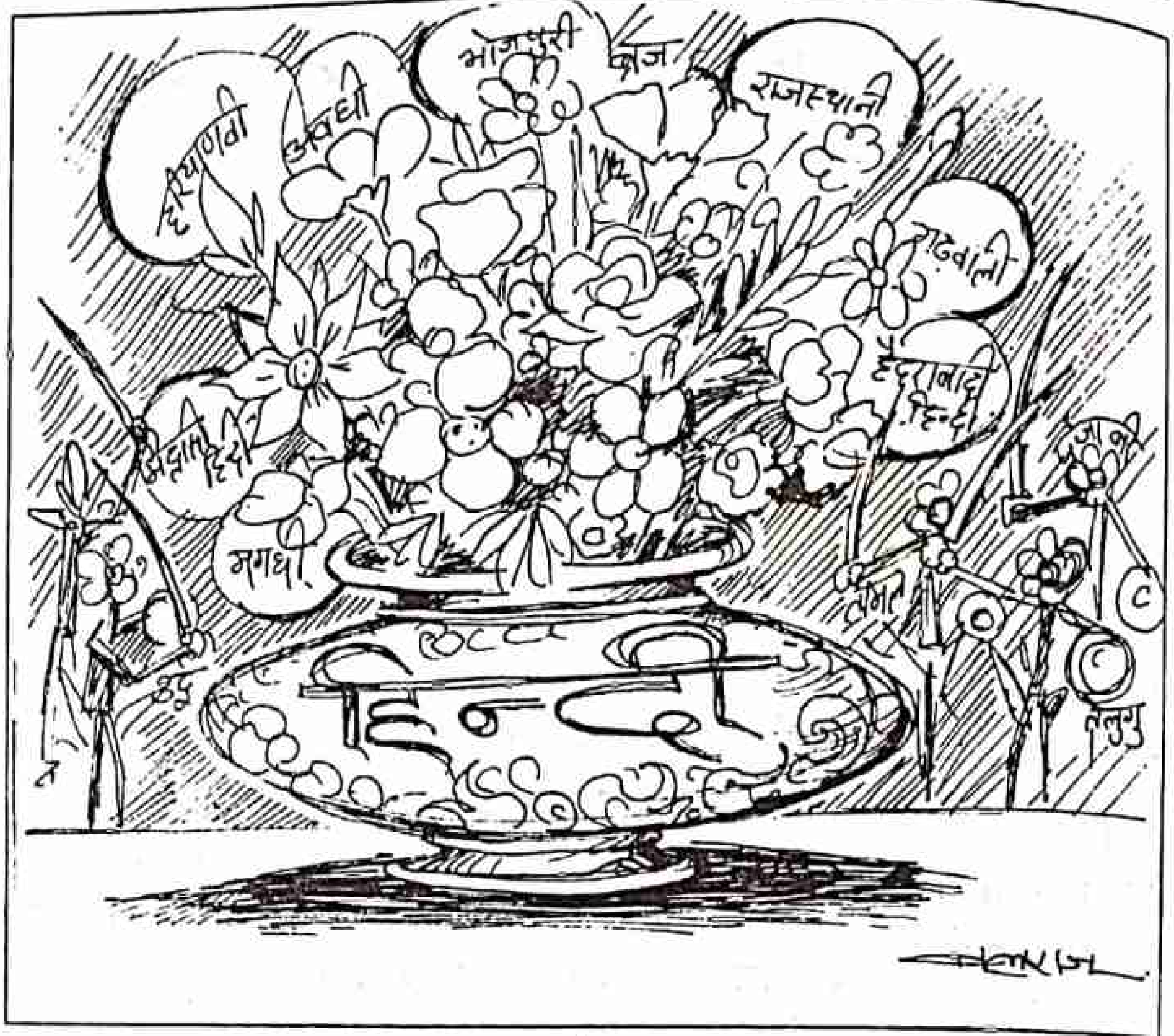

देशद्रोहियों की मनसा यह है कि बोड़ो साहित्य रोमन लिपि में लिखी जाए। इस प्रकार के प्रयास अंग्रेजों ने भारतीय भाषाओं के साथ भी किया था। इसके बावजूद देवनागरी लिपि केवल राष्ट्रीय लिपि ही नहीं है, विश्व की सबसे वैज्ञानिक लिपि है। भाषा और लिपि के विरोध का सीधा निशाना संस्कृति पर है। लिपि और भाषा पर अधिकार जमा लेने पर उस अंचल की संस्कृति मुठ्ठी में हो जाती है और इसके बाद इतिहास को मनमाना लिखकर व्यापक राष्ट्रीय जीवन से प्रभावित क्षेत्र को अलग कर दिया जाता है। अलगाव का यही रास्ता आतंक में परिवर्त्तित होकर अलग देश और राज्य की मांग बनता है। बिनेश्वर ब्रह्म का बलिदान राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना के सम्बर्द्धन की उनकी इच्छा के कारण हुआ है। हमें इस बलिदान से प्रेरित होना चाहिए और जागरुक बनना चाहिए। तभी अलगाववादी राष्ट्रद्रोही शक्तियों को मुँहतोड़ उत्तर दिया जा सकता है।

राजनैतिक शक्तियाँ भी क्षेत्रीयता को बढ़ावा देती हैं यह काम राजनीतिक स्वार्थ के लिए होता है। पर, ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा राजनैतिक चरित्र राजसत्ता के लिए क्षेत्रीयता को बढ़ावा देता है और राष्ट्र के साथ क्षेत्र का संतुलन नहीं रखता हो, तो वह आत्मघात कर रहा होता है। उसकी अवैधता उसे स्वयं मार देती है। क्षेत्रीयता के साथ राष्ट्रीयता का संतुलित विकास आवश्यक है। यह कार्य सहस्त्रों वर्ष के इतिहास में संस्कृत भाषा से सम्वाहित होने वाली राष्ट्रीय संस्कृति करती चली आई है। इस भाषा का सम्पोषण भी भारत के प्रत्येक अंचल के विद्वान करते रहे हैं। संभवतः संस्कृत की इस राष्ट्रीय आवश्यकता को समझकर पटना उच्च न्यायालय के एक न्यायधीश ने ठीक उस समय संस्कृत में न्याय पत्र लिखा जब बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव संस्कृत शिक्षा के राजकीय व्यय को बंद कर रहे थे और अपनी सिरफिरी बातों से संस्कृत की निंदा कर रहे थे।

कुछ वर्ष पहले की बात है नई दिल्ली स्थित साहित्य अकादमी, रवींद्रनाथ भवन में हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठित बुजुर्ग कवि त्रिलोचन शास्त्री का व्याख्यान सुनने मैं भी गया था। कवि

"लिपि और भाषा पर अधिकार जमा लेने पर उस अंचल की संस्कृति मुठ्ठी में हो जाती है और इसके बाद इतिहास को मनमाना लिखकर व्यापक राष्ट्रीय जीवन से प्रभावित क्षेत्र को अलग कर दिया जाता है। अलगाव का यही रास्ता आतंक में परिवर्त्तित होकर अलग देश और राज्य की मांग बनता है।"

Scanned with OKEN Scanner

त्रिलोचन अपने झरोखे से महाकवि निराला के विषय में बताने वाले थे। साहित्य अकादमी के उस कार्यक्रम के नाम में झरोखे शब्द का प्रयोग किया गया था। कार्यक्रम के आयोजकों की कल्पना रही होगी कि वक्ता अपने झरोखे से विषय बने हुए सर्जक व्यक्तित्व को प्रकट करे। निराला जैसा विराट कवि त्रिलोचन के झरोखे से कैसा दिखता है, मैं यह देखना चाहता था। कभी-कभी चांद भी खिड़की से बड़े सुहानेपन के साथ पूरा-पूरा झांक लेता है। भला निराला त्रिलोचन के झरोखे से क्यों नहीं दिखते। त्रिलोचन ने निराला से अपनी भेंट के किस्से सुनाए। लेकिन, उस किस्से में त्रिलोचन निराला से थोड़े भी कम नहीं थे। व्याख्यान आगे बढ़ा और त्रिलोचन अपने झरोखे पर स्वयं इस प्रकार तनकर खड़े हो गए कि निराला ओझल हो गए। वहाँ केवल त्रिलोचन दिखने लगे।

शब्दों पर बहुत ध्यान देने वाले मर्मज्ञ के रूप में मुझे त्रिलोचन जी का परिचय काशी की एक घरेलू कवि गोष्ठी में मिला था। उस गोष्ठी में एक कविता मैंने भी बाँची थी – तप्त क्षार सागर में / सिमटकर / रह पाएगी क्या / हिम द्रवित नदी? उन्होंने मेरे शब्दों पर मधुर ढंग से आपत्ति की थी। मैंने भी अपना पक्ष रखा था। उनकी आपत्ति तत्सम शब्दों के प्रयोग से थी। मेरा पक्ष अभिव्यक्ति के अनुरूप शब्द और शब्द की ध्वनि पर जा टिका। बात आगे नहीं बढ़ी। साहित्य अकादमी के व्याख्यान में त्रिलोचन ने बड़े जोरदार तरीके से अपनी बातें रखी थी। उन्होंने कहा, बंग्ला, मैथिली, भोजपुरी अवधी आदि में 'वन' शब्द नहीं बोला जाता, इन सभी में 'बन' शब्द का उच्चारण प्रचलित है। फिर संस्कृत में प्रयुक्त होने वाले 'वन' शब्द का प्रयोग क्यों होना चाहिए? मैं उनकी बातें सुनकर चिंतित हो गया, सोंचने लगा, क्या करूँ? यहाँ प्रतिवाद करना ठीक नहीं है, इनसे संगोष्ठी के बाद बात करनी चाहिए। त्रिलोचन जी जब अकादमी के परिसर में आ गए, मैंने उन्हें घेरा – 'क्षेत्रीयता की ढूहें क्यों खड़ी करना चाहते हैं आप? बंग्ला में 'चोख' शब्द का अर्थ आंख होता है। पर, क्या सभी लोग चोख का अर्थ आंख समझ समझेंगे? शब्दों की समग्र अर्थवत्ता के लिए ही चोख शब्द से संबंधित शब्द चक्षु बना हुआ है। खान का हीरा अलंकार के योग्य तब बनता है जब उसे तराशा गया हो। तत्सम शब्द तराशे हुए हीरे हैं। सर्व स्वीकृति और सर्वव्यापकता के लिए ही लोकभाषाओं के शब्दों को उनके धातु रूपों से अनुधवन करके उनका संस्कृत शब्द बनता हैं। क्षेत्रवाद को बढ़ावा नहीं दें श्रीमान, राष्ट्र के स्वरूप को ध्वस्त मत करें।' मेरी बात सुनकर त्रिलोचन शास्त्री तमतमा गए। उन्होंने कहा, 'आप से बात होगी'। तब तक कवि केदारनाथ सिंह उनके करीब आ गए। उन्होंने त्रिलोचन जी से कुछ पूछा। मैं मुड़ा और चल पड़ा। मेरी भेंट त्रिलोचन जी से फिर नहीं हुई, और न इसके लिए मैं उनके पीछे पड़ा।

सभी लोग अपनी-अपनी बौद्धिक सप्रभुता के स्वामी हैं। किसी की राय ऊपर से नीचे खिसकने की है – संस्कृत से प्राकृत की ओर, राष्ट्र से क्षेत्र की ओर, ज्याति से तम की ओर चेतन से जड़ की ओर, तो मेरी राय में इस प्रवृति से बचने की जरूरत है। क्योंकि यही अपसंस्कृति की प्रक्रिया है। यह सिर्फ संस्कृत-जगत का ध्वंस नहीं है, इसमें व्यवसाय और राजनीति की अपगामी मानसिकता भी है, जो समाज को जड़ीभूत कर देती है, परमार्थ की सत्ता मिटाकर स्वार्थ के द्वंद्वों को बढ़ावा देती है। जहां कहीं यह मानसिकता बढ़ी है वहाँ-वहाँ सर्वनाश हुआ है।

शब्दों पर बहुत ध्यान देने वाले मर्मज्ञ के रूप में मुझे त्रिलोचन जी का परिचय काशी की एक घरेलू कवि गोष्ठी में मिला था। उस गोष्ठी में एक कविता मैंने भी बाँची थी – तप्त क्षार सागर में / सिमटकर / रह पाएगी क्या / हिम द्रवित नदी? उन्होंने मेरे शब्दों पर मधुर ढंग से आपत्ति की थी।

इन दोषों से मुक्ति के लिए आवश्यक है कि संस्कृत के भीतर घटित होने वाली समग्रता की प्रक्रिया का कुछ परिचय प्राप्त किया जाए। 'सम' की ओर अग्रसरित होने की प्रक्रिया में ही संस्कार, संस्कृति, संस्कृत इत्यादि शब्द बने हैं। यह सम है क्या? जहां सारी विषमताएं एकात्म हो जाती हैं, गति और स्थिति, लय और ताल एक साथ मिलते हैं वही बिन्दु सम कहा जाती है। इसी सम की ओर अग्रसर होने की चेष्टा समग्र कहलाती है। यह बिन्दु कोई सामान्य उपलब्धि नहीं है। इसका ज्ञान भारतीय ज्ञान विज्ञान को एक सुनिश्चित दिशा में समायोजित करने में सफल हुआ। सामान्य लोक प्रचलित शब्द को इसी सम के ज्ञान ने संस्कार देकर संस्कृत किया। सम एक चित्तगत अधिष्ठान है। इसे तपस्या से पाया जाता है। बिना तप के सम समझ में नहीं आएगा। इसलिए सामाजिक या सांस्कृतिक संस्कार का कार्य केवल तपस्वी ही कर सकता हैं। यह अनुकरण से या व्यापारी बुद्धि से नहीं हो सकता। इसी सम के ज्ञान ने प्रकृति की स्वाभाविक गति को प्रयत्नपूर्वक रोका और उसे विकृत होने से बचाया, उस गति को संस्कारवती बनकर संस्कृति बनाया।

पं. दीनदयाल उपाध्याय सहित सभी संस्कृत धारा के मनीषियों में संस्कृति विषयक एक ही अवधारणा दिखाई देती है – भूख लगना प्रकृति है, मिल बाँट कर खाना संस्कृति है और छीन-झपट कर खाना विकृति। यह अवधारणा लोक आचरण में ही नहीं है, अपितु संस्कृत के भाषा-जगत में भी समान रूप से देखा जा सकता है। यह वैचारिक स्थापना इसलिए हो सकी है कि हमारे मनीषियों ने 'सम' की पहचान की। निश्चित रूप से यह कहना आवश्यक है कि संस्कृत केवल भाषा नहीं है, यह सुनियोजित एक जीवन पद्धति है, आचार-विचार आहार-विहार भी है।

प्राकृत को संस्कृत करने की प्रक्रिया भारत की संस्कृति में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है। यह प्रक्रिया नृत्य, संगीत, शिल्प आदि कलाओं से लेकर साहित्य की रचनाओं में भी दिखती है। इसी प्रक्रिया के अवघटित होने के कारण भारत में देववाणी संस्कृत ने देव संस्कृति को अवतरित किया और हम शाश्वत होने के अधिकारी हुए। जो भी बाहरी जड़तत्व हमारे सांस्कृतिक परिभ्रमण के वृत में प्रवेश कर गया – उसे हमारे उज्ज्वल संस्कारों के प्रभाव ने उत्कृष्टता प्रदान किया, उसे आत्मसात कर नए परिष्कृत में ढाल दिया। हमारी संस्कृति ने यह संस्कार पूरे विश्व को प्रदान किया है। इस की कृतज्ञता का अनुभव विश्व के श्रेष्ठ अध्येताओं ने किया है।

१८५३ ई० में कार्ल मार्क्स ने अपने भारत संबंधी लेख में भारत के पुनर्जीवित होने की आशा व्यक्त करते हुए लिखा था कि यह देश हमारी भाषाओं और हमारे धर्मों का उद्गम है

Scanned with OKEN Scanner

– डॉ. रामविलास शर्मा ने मार्क्स के इस कथन को उधृत करने के पहले की पंक्तियों में लिखा है, 'सन १७८६ में ग्रीक लैटिन और संस्कृत के क्रिया मूलों और व्याकरण रूपों में समानताएं देखकर विलियम जोन्स ने कल्पना की थी कि ये तीन भाषाएं एक ही स्रोत से जनमी है और वह स्रोत शायद अब नहीं है। डॉ. शर्मा आगे लिखते है कि 'जोन्स यह भी मानते थे कि ग्रीक की अपेक्षा संस्कृत अधिक पूर्ण है, लैटिन की अपेक्षा अधिक समृद्ध है और दोनों में से किसी की भी अपेक्षा अधिक सुचारु रूप से परिष्कृत है। जोन्स के लिए स्रोत भाषा से सबसे पुराना सबसे गहरा संबंध संस्कृत का था और इसीलिए वह ग्रीक लैटिन की अपेक्षा अधिक पूर्ण, समृद्ध और परिष्कृत थी।' विदेशी विद्वान विलियम जोन्स संस्कृत की श्रेष्ठता स्वीकारते हुए भी किस तरह कन्नी काटता नजर आ रहा है, इसे हम स्वतंत्र रूप से आलोचना करते हुए समझ सकते हैं। आज हम किसी विदेशी की राय के पराश्रित नहीं हैं। हम यह जानते हैं लैटिन और ग्रीक संस्कृत द्वारा समृद्ध की हुई भाषाएं हैं। इन भाषाओं का उद्‌गम एक ऐसी भाषा नहीं है जो लुप्त हो गई है। मूल भाषा संस्कृत ही है, इसीसे अन्य भाषाओं में व्याकरण की परिष्कार-प्रक्रिया गई है। विद्वानों के अनुमान में संस्कृत भाषा के पास दस लाख से अधिक शब्दों का विपुल भंडार था। मान्यता यह भी है कि संस्कृत का विशाल शब्द भंडार सर्वत्र प्रचलित था, जो विकृत होकर कालांतर में अपभ्रंश और प्राकृत की उत्पति का कारण बना। और प्राकृत भाषाओं का क्षेत्रश: रूप विकसित होता गया जिससे क्षेत्रीय भाषाएं निर्मित हुई। इस मान्यता के अनुसार भी मूल भाषा के रूप में संस्कृत को ही स्थान दिया गया है। और कार्ल मार्क्स को भी भाषा और धर्म के स्रोत के रूप में भारत को मानने में कोई आपत्ति नहीं है।

संस्कृत निर्माण की प्रक्रिया यह भी बतलाती है कि संस्कृत भाषा के अपकर्ष के कारण प्राकृत-अपभ्रंश भाषाएं नहीं बनी, ये प्राकृत रूप में थी, इनसे संस्कृत का निर्माण हुआ। ऊपर से नीचे आने और नीचे से ऊपर बढ़ने की दोनों क्रियाएँ संभव हो सकती हैं। जैसे बाहरी मुल्कों से आए अनेक तत्व हमारी निरंतर गतिमान संस्कृति-प्रक्रिया में मथे गए और उनमें भी सत्व उदित हो गया जैसे कॉफी को देर तक घोटते रहने पर वह सफेद हो जाता है। विजातीय तत्व भी उर्ध्व रेता बनकर मूल संस्कृति में समाहित हुए। आज इस कार्य की आवश्यक कहीं अधिक है, क्योंकि वर्तमान समय संस्कृतियों के संक्रमण का है, अनेक देशों और मानव जातियों के आहार-विहार, संचार माध्यमों और सांस्कृतिक संबंधों द्वारा आते-रहते हैं। हमारी मान्यताएं आज अपनी अवधारणा में स्पष्ट नहीं होगी तो उनके प्रभाव से हमारे समाज को आसानी से विकृत किया जा सकता है।

संस्कृत को यथास्थित अवस्था की भाषा और संस्कृति मानने से अच्छा है कि इसे प्रकृति और विकृति के मध्य सुनिश्चित की हुई अवस्था मानी जाए, इसे प्रयत्नपूर्वक प्राप्त

संस्कृत निर्माण की प्रक्रिया यह भी बतलाती है कि संस्कृत भाषा के अपकर्ष के कारण प्राकृत-अपभ्रंश भाषाएं नहीं बनी, ये प्राकृत रूप में थी, इनसे संस्कृत का निर्माण हुआ। ऊपर से नीचे आने और नीचे से ऊपर बढ़ने की दोनों क्रियाएँ संभव हो सकती हैं। जैसे बाहरी मुल्कों से आए अनेक तत्व हमारी निरंतर गतिमान संस्कृति-प्रक्रिया में मथे गए और उनमें भी सत्व उदित हो गया जैसे कॉफी को देर तक घोटते रहने पर वह सफेद हो जाता है।

अवस्था कही जाए, जिसमें निरंतर संस्कार की एक प्रक्रिया अवघटित होती है, तभी इसकी सजीव भूमिका दिखाई देगी। जैसा कि शास्त्रीय संगीत के रागों के निर्माण में लोक गीतों का उपयोग होता रहा है। लोक से लोकोत्तर की ओर अभियान करने से ही देवत्व प्राप्त होता है, देववाणी संस्कृत निसृत होती है और देव संस्कृति प्रकट होती है।

हमारे देश की धारणा है कि शब्द ब्रह्म स्वरूप हैं। उसमें अपार क्षमता है। यह सृष्टि का मूल है। मंत्र के शब्दों में देवता निवास करते हैं और इसी प्रकार प्रत्येक अस्तित्व का अपना एक चेतन रूप भी है। जैसे पृथ्वी के विषय में यह धारणा है कि पृथ्वी मात्र पदार्थों से निर्मित ग्रह पिंड नहीं है, इसका एक दैवी रूप भी है। पृथ्वी का भी एक हृदय है, जिसके परमव्योम में सत्य और अमृत का अधिष्ठान है – यस्या हृदयं परमेव्योमन् सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः। इसीलिए यह माता स्वरूप है – दैवी शक्ति से भरी-पूरी। यह श्री का सजीव विग्रह है। शब्द के ध्वनि-कोश में देवताओं का निवास, पृथ्वी के परमव्योम में सत्य और अमृत का वास यूं ही तो नहीं मान लिया गया, यह अवधारणा स्थूल वस्तु के चेतन रूप की खोज करने के कारण बनी। जैसे आज पदार्थ में परमाणु शक्ति की खोज हुई है। यह खोज योगियों के देश भारत ने भाषा के स्तर पर भी किया, ऐसे मूल वर्णों की ख़ोज हुई जिनसे किसी भी ध्वनि को लिपिबद्ध किया जा सकता है। इसी प्रकार ऐसे नाद वर्णों (सा रे ग म....) की खोज हुई जिससे किसी भी सांगीतिक ध्वनियों को पद्धतिबद्ध किया जा सकता है। संस्कत बनाने की प्रक्रिया में ऐसे मौलिक धातुओं की पहचान आवश्यक होती है जिसके कारण वह शब्द विद्यमान है। इस अवधारणा का हमारे सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। हमारे समाज में शब्दों का मिथ्या और अशुभ प्रयोग वर्जित हो गया। अपशब्द कथन को सामाजिक स्वीकृति नहीं मिली। शुभ शब्दों को बोलना प्रचलित हुआ। जैसे होली जलाई गई – इस बात को ब्रज में कहते हैं – होली मंगल हो गई। दुकान बंद करना नहीं कहकर – 'दुकान बढ़ाना' बोला गया। इसी प्रकार भाषा संस्कार ने हमारी अभिव्यक्ति के उपादानों को संस्कृत किया, हमारे सौंदर्यबोध को परिष्कृत किया और आचरण को भी संस्कारवान बनाया। यहाँ तक कि युद्ध भी इस प्रसाद से वंचित नहीं रहा। उसे भी एक नियम और आचरण का संस्कार मिला।

इससे हममें नैतिकता आई, श्रेष्ठ आचरण बना। हम सर्वधर्म समभाव को मानने वाले संस्कृत लोग बने, 'हम में सत्य, जीव दया, शुद्ध आहार, उत्तम आचरण की प्रधानता थी, पर आकांताओं में ऐसा कुछ भी नहीं था जिसके कारण हम उन्हें मनुष्य की श्रेणी में मानते। अभी भी यह वातावरण बना हुआ है – वचनबद्ध होना हमारे आचरण में है विश्वास करना हमारे स्वभाव में है दूसरों को दुख नहीं देना हमें प्रिय है, लेकिन क्या यही आचार संहिता उन लोगों का भी है जो हमारे संसर्ग में आ रहे हैं? क्या हम पड़ोसी देश पाकिस्तान या बंग्लादेश पर विश्वास कर सकते हैं? क्या मैत्री और सौहार्द का उसी प्रकार निर्वाह चीन या

अन्य शिकारी देशों द्वारा किया जाता है? अन्य जातियों, संस्कृतियों, भाषा-साहित्य और कलाओं द्वारा भी वही सद्वृतियाँ हमारे समाज में बढ़ावा पाती हैं जिसकी अपेक्षा हमें रहती है। आज भी भारत की आस्था और उत्तम आचरण ही छला जा रहा है। हमें सबोध संस्कारवान होने की आवश्यकता है, क्योंकि वर्त्तमान भारत में अनेक प्रकार की दस्यु प्रवृतियां अपना स्थान बना चुकी हैं। और आज हमारे संस्कार-यज्ञ की अग्नि पहले जैसी प्रचण्ड रूप में प्रज्ज्वलित नहीं है। हमें अपने संस्कार-यज्ञ की अग्नि को तीव्र करना होगा साथ ही विजातीय तत्वों के स्वभाव के प्रति भी जागरुक रहना होगा। उनके अनुरूप आचरण करना होगा। अद्यम प्रकृति के व्यक्तियों से अधम रूप में, मध्यम से मध्यम रूप में और उत्तम प्रकृति के व्यक्ति से उत्तम आचरण करने का निर्देश हमारे शास्त्रों ने दे रखा है। यह संश्लिष्ट और संदिग्ध युग एकमेक उलझे चेहरों का क्लोज है, इसका वर्गीकरण आवश्यक है।

भारतीय भाषाओं का साहित्य अपनी संस्कारित अभिव्यक्ति के लिए संस्कारित भाषा-साधन का उपयोग करता रहा है, इसमें आंखों की उपमा कमल से दी गई, खंजन पक्षी से दी गई। ये प्रकृति के उपादान सजीव है और हर्षोल्लास प्रदान करने वाले हैं। लेकिन आक्रांता-दस्युओं से इस भाषा उपादान की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी। उन्होंने आँखों को खंजर कहा। शायर गालिब उस लहू के कायल है जो आँख से टपके – जो आँख ही स न टपके वो लहू क्या है? अली सरदार जाफरी की काव्य भाषा देखिए – 'रात के सीने में आफताब खंजर की तरह' – रात का सीना चीरकर धँसा हुआ सूरज रूपी खंजर उसे लहूलुहान कर चुका है। यह है सुबह का साहित्यिक वर्णन। ऐसे साहित्य से कैसा समाज निर्मित होगा, इसकी कल्पना करने पर हत्यारों के समाज का चित्र सामने आ जाता है। फिराक गोरखपुरी की शायरी ने इन घृणित विम्बों से उर्दू की मुक्ति का प्रयास किया था। उनके द्वारा संस्कारित काव्य भाषा भारतीय जन मानस की ओर मुड़ी थी, अन्य कई शायरों ने भी देश की जमीन से अपनी काव्य भाषा की निर्मित की। उन्हें रेखांकित और प्रतिष्ठित करना चाहिए।

खून से मेंहदी लगाने का व्यापार बहुत दिनों चलता भी नहीं, आज लोक शक्तियों के उदय का दौर है। दुनिया की लोक संस्कृतियाँ ही अपनी विरासत के साथ आज संस्कृति उत्पादन के व्यापार में अग्रणी हुई हैं। पॉप रॉक के धूम-धड़ाके के आगे लोक संवेदनाओं को आहत कर कला बिखरने वाली खून-कत्ल-खंजर की काव्य भाषा पस्त पड़ गई है। बाहरी देशों की लोक संस्कृति के उद्यम की बाढ़ को हमारे देश की लोक संस्कृति के उद्दाम रूप ही रोक रहे हैं। रॉक-पॉप के समानांतर इस समय लोक संस्कृतियों पर आधारित संगीत गीत आ खड़ा हुआ है। बाजार द्वारा निर्मित इस सांस्कृतिक वातावरण को हम प्राकृत कह सकते हैं। हम इसके बाद संस्कृत संगीत से इसका संबंध निर्धारण कर इसके संस्कार की दिशा सुनिश्चित कर सकते है। इन्हें विकृत होकर नष्ट होने से पहले संस्कृत का अनुभव दिया जा सकता है। यही कार्य सामाजिक आचरण में भी हो सकता है।

यह चिंतित होने की बात है कि देश के कला-छंदों पर विजातीय चेतना का साम्राज्य छाया हुआ है। फिल्म, धारावाहिक कोई छोटा और अप्रभावकारी माध्यम नहीं है। इसे असंस्कृत ताकतें, संचालित कर रही है। इसके नियंत्रण का कोई स्पष्ट नियम नहीं है। यह काम संस्कृत प्रसूत संस्कृति ही कर सकती है।

बेरोजगारी-भूख-निराशा और अपराध के हद तक जाने वाले समाज को संयम-धैर्य से संस्कृति की ओर लाने के लिए पहले प्राकृत दशा में ले जाना आवश्यक है। जहां उसकी आवश्यक आवश्यकता पूरी हो, और तब उसे विकृति के सर्वनाशी खतरों की पहचान कराकर सम्यक् जीवन पथ पर प्रेरित करना होगा। विकृत दशा में पहुँचने वाला जन समुदाय सिर्फ निर्धन वर्ग ही नहीं होता, इनसे भी तीव्र गति से विकृत होने वाला जनसमुदाय वह होता है जिसके पास अतिशय धन साधन हो गया है। इस जन समुदाय को भी बचाने के लिए प्राकृत दशा में लाना होगा। इनकी विकृतियों को दूर कर वास्तविक जीवन देने के लिए अतिरिक्त धन से मुक्ति दिलानी पड़ेगी और अतिरिक्त धन से निर्धन लोगों को सम्पोषित करना होगा। यह संतुलन बनना राज्य व्यवस्था का दायित्व है। इस कर्त्तव्य के पालन से संस्कृत राज्य व्यवस्था बनती है।

संस्कृत राष्ट्र जीवन का निर्माण करना हमारी शिक्षा व्यवस्था का दायित्व रहा है। यह शिक्षा संस्कृत हुई भाषा के माध्यम से ही देने की व्यवस्था थी, जिससे हमारे मस्तिष्क में झंकृत होने वाली शब्द-व्यवस्था भी संगीतमय मनोभूमि बनाए, हमारा चिंतन पद्धति बद्ध हो, हमारे विचार छंदमय हों। छंदित मानस की सोंच-समझ कभी अतिवादी नहीं होती, वह सदैव जीवनदायी होती है। इस शिक्षा व्यवस्था का महत्व बिना समझे शासकों ने संस्कृत को सिर्फ एक भाषा समझ लिया और मानव मस्तिष्क को एक उत्पादक संसाधन। और इसे मनमाना उपयोग-उपभोग के लिए तैयार किया जाने लगा। आज समाज अपने जीवन मूल्यों से टूटने लगा है, विकृतियाँ फैलती जा रही है। कानून के अम्बार लगाए जा रहे है, दंड विधान की नियमावलियाँ रची जा रही है। कौन करेगा वास्तविक न्याय और प्रशासन? जो विकृति के उत्पाद हैं उनसे सस्कृति की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

यदि भारत की समाज व्यवस्था और गृह व्यवस्था में निजी संस्कार की प्रक्रिया नहीं होती, इनमें धर्म चरितार्थ नहीं होता, माता-पिता धर्मशील नहीं होते तो प्रचलित शिक्षा की व्यवस्था अब तक सब कुछ चौपट कर चुकी होती। वस्तुतः हम प्रचलित शिक्षा व्यवस्था को आज भी निजी आचरणों से स्वयं संस्कारित और प्रचालित करते रहे हैं। अब यह क्षमता धीरे-धीरे गिर रही है। शिक्षा का व्यवसाय हमें पतित बना रहा है, संत्रस्त और अकेला कर रहा है। सारी व्यवस्थाएँ विकृति की ओर ले जाने में लगी हैं।

ऐसे दुर्दिन में हमारी संस्कृति की पुनर्रचना एक मात्र संस्कृत बनाने वाली शिक्षा और संस्कृत भाषा से हो सकती है। जिन्हें यह लगता है कि हम एक विकसित युग में जी रहे हैं और संस्कृत बहुत पिछड़ चुकी है, यह भाषा क्या इस युग का प्रतिनिधित्व करेगी? उन्हें यह जानकर प्रसन्नता हो सकती है कि विज्ञान के रास्ते बढ़ते जाने वाला वर्तमान विश्व अभी अब इस अवस्था में आ रहा है जब उसे भारत की संचित ज्ञान राशि से सम्वाद हो पा रहा है। इलैक्ट्रोनिक तरंगों के संजाल का विषय जिस मस्तिष्क में नहीं होगा, वह छंदों का गणित और ध्वनियों की ज्यामिति क्या समझेगा। भारतीय ज्ञान की लोकोत्तर भूमि तो अब प्रासंगिक हो रही है। संस्कार तंतुओं से निर्मित होने वाली भारतीय संस्कृति की वैश्विक भूमिका का आरंभ अब हो रहा है, संस्कृत अपनी पूरी सत्ता में प्रतिष्ठित होने जा रही है इससे हमारी संस्कृति भी अपना स्वरूप निर्धारित कर सकेगी। ■

Scanned with OKEN Scanner

आँध्र प्रदेश के बुनकर आत्महत्या करने पर मजबूर क्यों?

■ मुकुंद कुमार सिंह

ये लोग दूसरों को मार कर स्वयं को जीवित रखने से अच्छा समझ रहे हैं स्वयं मर जाना। ऐसे सच्चे श्रमशील लोगों के लिए यदि आँखों में आँसू और कर्त्तव्य की व्याकुलता नहीं है तो सत्ताधारी नेताओं को सरकार चलाना छोड़कर शर्म से चुल्लूभर पानी में डूब मरना चाहिए, यदि देश में जनतांत्रिक राज्य व्यवस्था नहीं होती, मुठ्ठीभर सेठों के वोट से विधानसभा और लोकसभा के सदस्य चुने जाते, तब शर्म करने की कोई जरूरत नहीं थी और न डूब मरने की जरूरत।

आंध्र प्रदेश में पिछले वर्ष के प्रारंभ से ही बुनकरों की आत्महत्या का सिलसिला शुरु हो गया है। पंद्रह महीनों में सौ के लगभग बुनकरों ने आत्महत्या की है। केवल सिर्सिला नाम के शहर में ३५ बुनकरों ने आत्महत्या की है। सिर्सिला में सबसे अधिक पावरलूम चला करते थे, इन दिनों यहां के १५ हजार पावर लूम बंद हो गए हैं। इन बुनकरों के वस्त्र उत्पादन के बाजार को बड़ी कपड़ा मिलों ने छीन लिया है। बुनकरों के प्रतिनिधियों की सरकार से धागों पर लगने वाले बिक्री कर और बिजली के मूल्य में छूट देने की अपेक्षा है। उन्हें आशा है कि ऐसी छूटें उन्हें मिले तो उनका लागत मूल्य कम हो जाएगा, वे सस्ते दामों पर अपना वस्त्र बाजार में बेच सकेंगे और कपड़ा मिलों की चुनौतियाँ झेल सकेंगे।

देश में ठीक इसी प्रकार की अपेक्षा बड़े उद्योगपति भी सरकार से कर रहे हैं, लचीला श्रम कानून, सस्ती ब्याज दर पर कर्ज, उचित दाम पर लगातार बिजली इत्यादि सुविधाएँ होंगी तो देश के बड़े उद्योग विदेशी कंपनियों के उत्पादन से लोहा ले सकते हैं। बड़े उद्योगपतियों की माँगें मानकर ही सरकार ने श्रम कानून में हस्तक्षेप किया है। हजार मजदूरों को स्वेच्छा से कोई कंपनी निकाल बाहर कर सकती है। इसकी उन्हें छूट मिल गई है। अब देखना है कि बड़ी-बड़ी विदेशी कंपनियों से देशी बड़ी कंपनियाँ किस प्रकार टक्कर लेती हैं और इनके मारे हुए छोटे उद्योग वाले लोग, मजदूरों, कामगारों के साथ किस तरह बिलबिलाकर मरते है।

चीन में अर्थव्यवस्था मजबूत बनाने के लिए सरकारी उद्योगों की आर्थिक सहायता बंद की गई थी। लाखों चीनियों को उद्योगों से निकाल बाहर किया गया था। बेरोजगारी की दशा में चीन के लोग अपराध के रास्ते पर चल पड़े। चीन में आर्थिक मजबूती और नृशंस अपराधों का ग्राफ एक साथ बढ़ रहे है। चीन के अधिकारी यह मानने लगे है कि सबसे अधिक नृशंस अपराधों की बढ़त सरकार द्वारा अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए उद्यमों में सुधार लाने के अभियान से हुई बेरोजगारी का परिणाम है। चीन में तेज गति से बढ़ रहे अपराध को लेकर वहाँ का प्रशासन भारी चिंता में पड़ा हुआ है। इसके बावजूद कि चीन इस समय विश्व में सबसे अधिक मृत्युदण्ड देने वाले देश है। वहाँ १९९९ में १२६३ से अधिक लोगों को मृत्युदण्ड दिया गया था। इन दिनों चीन में 'स्ट्राइक हार्ड' नाम से मृत्युदण्ड देने का अभियान तेज गति से चलाया जा रहा है। जनशत्रुओं को मौत के घाट उतारने का कार्यक्रम चीन में कितनी शांति बहाल कर पा रहा है, इसे विश्व के लोग देखेंगे। और आने वाले समय में निर्णय भी करेंगे कि वास्तव में जनशत्रु है कौन? देश चलाने वाली सरकार, आर्थिक दौड़ आयोजित करने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अथवा हताशा में अपराधी बनने वाले लोग?

आज की विश्वस्तरीय आर्थिक दौड़ में आगे निकलने के लिए बहुत लोग यह मानकर चल रहे हैं कि अधिक से अधिक लोगों की मौतें होती रहेंगी। अपराध की ओर प्रेरित होकर लोग इस मौत को सरकार के हाथों मृत्युदण्ड के रूप में प्राप्त करें अथवा आत्महत्या करके स्वयं हासिल कर लें। यदि भारत के लोग आर्थिक सुधार के दौर में आत्महत्या का रास्ता अपना रहें हैं चीन की तरह नृशंस अपराध का नहीं तो इसका मतलब हुआ कि उनकी मनोवैज्ञानिक संरचना में अभी भी सद्गुण बचा हुआ है। ये लोग दूसरों को मार कर स्वयं को जीवित रखने से अच्छा समझ रहे हैं स्वयं मर जाना। ऐसे सच्चे श्रमशील लोगों के लिए यदि आँखों में आँसू और कर्त्तव्य की व्याकुलता नहीं है तो सत्ताधारी नेताओं को सरकार चलाना छोड़कर शर्म से चुल्लूभर पानी में डूब मरना चाहिए, यदि देश में जनतांत्रिक राज्य व्यवस्था नहीं होती, मुठ्ठीभर सेठों के वोट से विधानसभा और लोकसभा के सदस्य चुने जाते, तब शर्म करने की कोई जरूरत नहीं थी और न डूब मरने की जरूरत।

आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्राबाबू नायडू बुनकरों की मौत को अमरीका के रास्ते चलने के लिए जरूरी समझते हों तो हमें उनके सूचना प्रौद्योगिकी की विफलता अथवा उसकी सीमा तय हो जाने के दिन गिनने होंगे। यह भी बताना होगा कि गरीबी और अमीरी के बीच खुदने वाली खाई में सिर्फ आत्महत्या ही नहीं उपजती है, चीन की तरह अपराध भी उपजता हैं। समाज के दुख दर्द से फूट कर निकले अपराध में नैतिक बल भी काम करता है। ऐसे अपराध पर प्रशासन काबू कर ले, इसमें संशय है।

किसानों की आत्महत्या और बुनकरों की

Scanned with OKEN Scanner

आत्महत्या अमीरी-गरीबी के बीच की एक ही खाई से उत्पन्न हुई हैं। आंध्र प्रदेश की धरती पर खुदी हुई इसी खाई में २० हजार से भी अधिक युवतियों को खाड़ी देशों में यौन-शोषण और मौत के लिए मजबूर होने का पाप भी उपज रहा है। कडप्पा, प्रकाशम हैदराबाद रंगारेड्डी आदि आंध्र प्रदेश के जिलों से खाड़ी देशों में बतौर नौकरानी ले जायी गई युवतियाँ की आहों को पैदा करने वाली अंधी आर्थिक दौड़ में आंध्र प्रदेश की सरकार ही है।

गरीबी पैदा करने वाली कोई सरकार हो या बड़ी देशी मिलों के उद्योगपति, जिन्हें इस बात का ध्यान नहीं कि ऐसे छोटे उत्पादन न करें, जिस पर छोटे उद्यमियों का कारोबार चल रहा है, अथवा स्वयं ग्राहक भी जो अपनी छोटी तुष्टि के लिए छोटे उत्पादकों के उत्पादन की उपेक्षा करते हैं, और इसके भी आगे जाकर विदेशी उत्पादनों की खरीद के पीछे देश के आर्थिक हित का मतलब तक नहीं समझते, ये सभी लोग पाप के भागी होने से नहीं बच सकते। यह पाप मरने के बाद नहीं पकड़ेगा, कभी भी, कहीं भी किसी रूप में यह पाप दबोच लेगा। इसका नया नाम अशांति और अपराध है।

यह सिर्फ सरकार का नहीं, प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह इस बात के लिए जागरुक बने कि देश की आर्थिक व्यवस्था में कृषि उत्पाद, छोटे उद्योग और बड़े उद्योग एक दूसरे का पोषक बनें, एक दूसरे का शोषक नहीं। इन सभी उत्पादकों का क्षेत्र कानूनी ढंग से निर्धारित हो, जिस प्रकार गन्ना मिलें अपने क्षेत्र में दूसरे उत्पादकों को गैरकानूनी करार देती हैं। प्रत्येक ग्राहक भी यह निश्चित करें कि हमें किस स्तर की खरीद के लिए किस स्तर के उत्पादकों को मूल्य देना चाहिए। इसके साथ यह भी जरूरी है कि छोटे उद्यमियों को अपने उत्पादन की गुणवत्ता उत्तम रखनी होगी, मिलावट और घटिया वस्तुओं से खार खाकर ग्राहक बड़े लेबल की ओर भागता है। जिससे छोटे उद्यमियों की मौत होती है।

याद रहे कि देश में व्यक्तिवाद को बढ़ने से भ्रष्टाचार जन्म लेता है, राष्ट्रभक्ति को बढ़ाने से सदाचार। राष्ट्र भक्ति के विरुद्ध उठने वाली सारी आवाजें व्यक्तिवाद को पैदा कर भ्रष्टाचार बढ़ाती हैं, जिससे उद्यमी स्वार्थी हो जाते हैं, जो अंततः किसान और कामकारों की मौत के कारण बनते हैं। ■

स्वदेशी 'व्यंग्य

भूमण्डलीकरण का राजयोग

■ त्रिशूलपाणि

क्यों चाहते हैं आप कि देश में एक देश होने का अनुभव बना रहे, आप राजयोग नहीं जानते हैं क्या? देह और देही में अन्तर है। देह में 'मैं' नामधारी एक अस्तित्व रहता है। देह जन्म लेती और मर जाती है। वह 'मैं' कभी नहीं मरता। इस आधार पर कृपया आप नए राजयोग को समझिये – आप देश नहीं हैं, प्रांत नहीं, जिला नहीं, प्रखंड नहीं, गाँव नहीं, टोला नहीं, पट्टी नहीं, जाति और कुनबा भी नहीं और न आप कुल और परिवार हैं। आप दूसरा कुछ नहीं हैं श्रीमान, आप एक उपभोक्ता हैं – सिर्फ उपभोक्ता। यह आज का शाश्वत मैं है। यही सच्चा राजयोग आज टी. वी कार्यक्रमों, फिल्मों, विज्ञापनों से पढ़ाये जा रहा है। इससे आपके और आपके देश के होने का अहसास मिटता है और आप धीरे-धीरे भूमंडलीकृत होते हैं – विश्वग्राम के एक ग्रामीण वे लोग जो आपको यह पाठ पढाते हैं – सच्चे राजयोगी हैं, वही राज करते हैं।

यह एक नयी योग साधना है। इस साधना में आप हर तरह से 'रिलेक्स' होंगे, चिन्ता विहीन कर्महीन और आप अचल-स्थैर्य की प्राप्ति कर लेंगे, स्थितिप्रज्ञ हो जाएँगे। इसके बाद आपको इच्छा करने की भी जरूरत नहीं पड़ेगी। आपका 'च्वाइस' कैसा होगा? यह तय करेंगी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ। आपका दिल कैसे 'मोर-मोर' माँगेगा, उन्हें पता है।

आपके देश की शासन व्यवस्था ढीली है या शख्त? उसे कैसी होनी चाहिए, किस देश के मॉडल में? यदि विकास करना होता वह विकास कैसा हो – ये चिन्ता आपका सिरदर्द नहीं बनेगी, संसद-संविधान कानून-न्याय, सब सम्हालने वाले विशेषज्ञ उनके पास हैं। बिजली, पानी, रोटी, प्याज, साग-भाजी, कपड़े-लत्ते ही नहीं मंत्री-संतरी भी अच्छी ब्राण्ड के एक्सपार्ट क्वालिटी में मिल जाएँगे। आपकी दशा सुधार कर रखना उनका काम है। बस, एक ही काम आपके जिम्मे है कि आप उनके राजयोग के चिन्तन-पथ पर चलिए। आप अपने देश के इतिहास स्मृति, धर्मशास्त्र, पूर्वज-पितर और कोई भी गर्व गाथा- कभी याद नहीं करेंगे। भूगोल के दायरे से बाहर इतिहास की सीमा से आगे आपको चलना ही होगा।

इसके आगे भी आपको ध्यान रखना होगा कि आप देह भी कत्तई नहीं हैं और नहीं कभी रहेंगे, भीतरी अंगो से लेकर बाहरी अंगो तक ज्ञान इन्द्रियों से मुक्त कर्म इंन्द्रियों से रहित होंगे। सच्चे राजयोग का वैश्विक प्रतिफल पैदा करने के लिए तन-मन-धन से पूर्ण समर्पण चाहिये। भूमंडलीकरण का यह राजयोग तभी आपको विश्व ग्राम का ग्रामीण बना सकता है।

यह मत सोचिए कि इस काम से आप अस्तित्व विहीन हो जाएँगे। जैसे आपके देश में बिजली अमेरिका से, पानी चीन से, अन्न हालैण्ड से, वस्त्र कोरिया से, घर जापान से, दवा जर्मनी से पहुँचेंगे और राज व्यवस्था में भी प्रधानमंत्री इटली से राष्ट्रपति कनाडा से, मुख्यमंत्री फ्रांस से आयात होंगे, आपके कुटुम्ब में भी कोई कमी नहीं रहेगी। दादा डेनमार्क से, दादी यूगाण्डा से, भाई नाइजेरिया से, इंग्लैण्ड से, बहू सूडान से, और बेटा इरान से आयात हो जाएँगे। इसके आगे भी इन्तजाम है, आपकी देह में किडनी सिडनी की, फेफेड़े फिनलैण्ड का और हॉर्ट हवाना का लग जाएगा। आपके अंग-अंग से दिखेगा कि आप भूमंडलित हुए हैं। आप इस परम दशा में पहुँचे, इसके लिए वह मामूली शर्त आप एक बार और याद कर लीजिए, आपको देश-मोह और देह-मोह छोड़ देना पड़ेगा। आप इस मामूली शर्त को सदैव याद रखेंगे।

राजयोग का यह मार्ग आपको अवश्य सर्वग्रही बनाएगा। आप में भूमंडल होगा, आप भूमंडल के होंगे। लेकिन आप कहीं दूसरे देश में जाकर विश्व ग्राम के ग्रामीण नहीं बनवाले। आप अपने ही गाँव-मुहल्ले -कस्बे, और नगर में निवास करेंगे, बेकारी फटेहाली भूखमरी छीनाझपटी गाली-गलौज के वातावरण में भी शांत पड़े हुए। बस भूमंडल नाचता रहेगा, आप भी उसके साथ अज्ञात रूप से नाचते रहेंगे और अन्तकाल यानी इन्तकाल तक पहुँच जाएँगे। ■

Scanned with OKEN Scanner

चीनी पहेली और भारत

चीनी रणनीति से हमें यह शिक्षा भी मिलती है कि विश्व व्यापार संगठन में जाने की तैयारी कैसी होनी चाहिए। भारत सरकार को यह शिक्षा मिलती है कि विश्व व्यापार संगठन चाहे एक बहुपक्षीय संस्था है लेकिन फिर भी वह राष्ट्रीय हितों से ऊपर नहीं है और इसलिए हर देश को विश्व व्यापार संगठन में बेहतर लाभ प्राप्त कर अपने राष्ट्र की समृद्धि के लिए सर्वथा प्रयासरत रहना चाहिए।

■ डॉ. अश्विनी महाजन

विश्व व्यापार संगठन १९९५ में आस्तित्व में आया। चीन उन ३४ देशों में से एक है जिसने विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता तो ग्रहण नहीं की लेकिन बाहर रहते हुए प्रेक्षक की हैसियत रखी। बाद में चीन ने उसकी सदस्यता के लिए आवेदन किया जो उसे तुरंत नहीं दी गई और उसे कहा गया कि अपनी सदस्यता के संदर्भ में आपत्तिओं का निराकरण करे। अब जब उसने अपनी सदस्यता संबंधी सभी रुकावटों को दूर कर दिया है, तो फिर ऐसा महसूस होता है कि चीन अभी अपनी विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता के बारे में इच्छुक नहीं।

१. चीन ने प्रारंभ में क्यों मात्र प्रेक्षक बनाना स्वीकार (विश्व व्यापार संगठन को बाहर से देखने की हैसियत के लिए) किया और उसकी सदस्यता ग्रहण नहीं की?
२. विश्व व्यापार संगठन की उसकी सदस्यता के बारे में क्या रुकावटें थी?
३. चीन अभी भी विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता का इच्छुक क्यों नहीं है?
४. क्या वह उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर रहा है?
५. क्या इस बात में सच्चाई है कि विश्व व्यापार संगठन का सदस्य न बनने के कारण चीन पछता रहा है अब किसी भी कीमत पर उसका सदस्य बनना चाहता है।

जबकि हम चीन को विश्व व्यापार संगठन के संदर्भ में देखते है तो उपर्युक्त कुछ प्रश्न हैं जो ये सोचने पर विवश करते हैं। चीन को विश्व व्यापार संगठन को मात्र एक सदस्यता का प्रार्थी न समझकर गंभीर विश्लेषण की आवश्यकता है। यह न केवल तथ्यों को बेहतर ढंग से जानने के लिए मदद करेगा बल्कि उसमें भारत के लिए सबक लेने के लिए भी संभावना होगी।

विशेषज्ञों का मानना है कि चीन विश्व व्यापार संगठन को किसी से भी बेहतर जानता है और चीन ने विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता इसलिए नहीं ग्रहण की कि वह उसके फायदे नुकसान भली भांति जानता था। आज जब अभी तक चीन विश्व व्यापार संगठन का सदस्य नहीं है फिर भी उसके बारे में भरपूर जानकारी रखता है। एक प्रेक्षक होने के नाते वह विश्व व्यापार संगठन के संदर्भ की पूरी जानकारी रखता है।

१. विश्व व्यापार संगठन के नियम।
२. विश्व व्यापार संगठन की कार्य पद्धति।
३. विश्व व्यापार संगठन के समझौतों और प्रावधानों को लागू करने के संबंध में विभिन्न कठिनाईयाँ।
४. विश्व व्यापार संगठन के प्रति दुनियाभर के लोगों की प्रतिक्रिया।

आज चीन मात्र विश्व व्यापार संगठन का प्रेक्षक ही नहीं बल्कि सदस्यता का प्रार्थी भी है। वह विश्व व्यापार संगठन में शोर भी मचा सकता है और विश्व व्यापार संगठन के सदस्य भी उसकी अवहेलना नहीं कर सकते। यह सब करते हुए उसे विश्व व्यापार संगठन के दुष्प्रभावों को भी सहने की जरूरत भी नहीं।

पिछले ६ वर्षों में जब से विश्व व्यापार संगठन आस्तित्व में आया है, चीन की कार्यनीति, अत्यंत महत्वपूर्ण है। विश्व व्यापार संगठन में किस प्रकार से तैयारी करके काम करना चाहिए, वह उसका जीता जागता उदाहरण है। जो कुछ दूसरे देश नहीं कर रहे थे, चीन वही कर रहा था। उनके पास विशेष लाभ था –

१. द्विपक्षीय समझौतों के लम्बे अनुभव का।
२. पिछले ६ वर्षों में विश्व व्यापार संगठन के कार्यकलापों के अनुभव का।

चीन ने विश्व व्यापार संगठन के कई (भारत और अमरीका सहित) सदस्य देशों से द्विपक्षीय समझौते किए और सर्वप्रिय राष्ट्र का दर्जा प्राप्त किया। इसके अतिरिक्त वह बारास्ता नेपाल या अन्य देशों के भी माल भेजता रहा और उसने उन देशों से भारत की व्यापार संधि का भी भरपूर अनुचित लाभ उठाया है। इसका अभिप्राय यह है कि जब चीन देखता है कि नेपाल या किसी अन्य 'सार्क' देश से भारत में आयात शुल्क रहित है तो वह उसका अनुचित लाभ उठाकर अपना माल बारास्ता नेपाल (अथवा किसी अन्य देश) के माल भेजकर लाभ उठाता है। दूसरे देशों के साथ व्यापार में भी चीन इसी प्रकार के हथकण्डे अपनाता है।

चीन को लाभ

अब चीन जब कभी भी (जब वह तय करे) विश्व व्यापार संगठन में शामिल होता है तो उसके पास वह सब जानकारी होगी जो एक सदस्य देश को होनी चाहिए थी लेकिन किसी के पास भी सदस्यता प्राप्त करने के समय नहीं थी। अब वह विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों से उत्पन्न चुनौतियों का बेहतर ढंग से सामना करने के लिए तैयार है जबकि अभी तक वह विश्व व्यापार संगठन के सख्त नियमों का पालन किए बिना बड़ी संख्या में देशों से सर्वप्रिय राष्ट्र के दर्जा का लाभ उठा ही रहा है।

चीन की पहले अमरीका द्वारा दर्ज कई आपत्तियों के कारण, चीन की सदस्यता में कई रुकावटें थी। कुछ समय पूर्व चीन-अमरीका के बीच समझौते के बाद वे रुकावटें तो दूर हो चुकी हैं। इसके साथ ही चीन के विश्व व्यापार संगठन में प्रवेश की सभी रुकावटें समाप्त हो चुकी है। लेकिन चीन की विश्व व्यापार संगठन में अभी भी तुरंत सदस्यता में अनिच्छा के कारण पूरा विश्व पहले से अधिक चकित है।

Scanned with OKEN Scanner

क्योंकि सभी रोड़े हटने के बाद चीन ने अपनी सदस्यता रोकने के लिए स्वयं ही रोड़े अटका दिए हैं। विश्व व्यापार संगठन में विकासशील देशों को तीन भागों में बाँटा गया है। पहली श्रेणी अति अल्पविकसित देशों की है। दूसरी श्रेणी में विकासशील देश आते हैं जिनकी प्रति व्यक्ति आय एक हजार अमरीकी डॉलर से कम है। तीसरी श्रेणी 'अन्य' विकासशील देशों की है जिनकी आय एक हजार अमरीकी डॉलर से अधिक है। 'अन्य' श्रेणी में आने वाले विकासशील देशों को विश्व व्यापार संगठन में विकसित देशों का सा ही व्यवहार प्राप्त होता है। चूँकि चीन की प्रतिव्यक्ति आय अब एक हजार डॉलर पार कर चुकी है, इसलिए अब उसे दूसरी श्रेणी में नहीं रखा जा सकता और अब उसे विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता लेने के बाद विकसित देशों का सा ही व्यवहार मिलेगा। यह जानते हुए भी कि जो कुछ वह माँग रहा है वह उसे मिलेगा नहीं, फिर भी वह स्वयं को 'अन्य' की बजाय 'विकासशील देशों' की श्रेणी में रखने का अनुरोध कर रहा है। यानी वह स्वयं ही अपनी विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता में रुकावटें खड़ी कर रहा है। क्या इससे यह समझें कि वह विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता चाहता ही नहीं है। शायद यह सच नहीं है। लेकिन वह उसके लिए उपयुक्त समय की प्रतीक्षा कर रहा है। अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि वो उपयुक्त समय कब होगा।

चीन को वर्षों के लम्बे अनुभव के बाद, विश्व व्यापार संगठन के प्रभावों और बाध्यताओं का पूरा ज्ञान हो चुका है। चीन को भली-भांति पता है कि विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता लेने के बाद उसे समाजवादी बाजार अर्थव्यवस्था के स्थान पर मुक्त बाजार व्यवस्था को अपनाना होगा। विशेषज्ञों का मानना है कि चीन में कई छिपी और कई जाहिर अकुशलताएँ हैं और वे मुक्त व्यापार के सिद्धातों को अपनाने के बाद पूरी तरह से उजागर हो जाएँगी। चीन की अर्थव्यवस्था का पेचीदा स्वरूप तथा उसकी राजकोषीय और वित्तीय प्रणाली की कमजोरियाँ उसे बाजार अर्थव्यवस्था के संदर्भ में पूर्णतया अनुपयुक्त बनाती है। एक तरफ चीन ने विश्व व्यापार संगठन को भरोसा दिलाया है कि एक बार शामिल होने के बाद वह उसके समस्त नियमों का पूरा पालन करेगा। इसलिए वह बड़ी सतर्कता से धीरे-धीरे चल रहा है और वह भी तब जबकि सदस्यता की देरी से उसे कुछ नुकसान होने वाला नहीं है।

अपनी लागत कुशलताओं के झूठ के उजागर होने के जोखिम के साथ-साथ चीन को उन बाजारों को खोने का भी जोखिम है जिन पर वह कब्जा जमा चुका है। वह उन बजारों पर अपना कब्जा पक्का करना चाहता है और उसके बाद वह विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता जोशो-खरोश के साथ लेना चाहता है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि चीन कभी भी विश्व व्यापार संगठन की गाड़ी को जल्दबाजी में पकड़ना नहीं चाहता था। बल्कि वह तो बिना विश्व व्यापार संगठन की सदस्यता का झंझट पाले बिना एक सोची समझी रणनीति पर चलकर अपने उद्देश्यों की पूर्ति कर रहा है। इस बीच में वह अपनी आवश्यकता के अनुरूप संस्थागत परिवर्तन कर रहा है और हर संभव लाभ उठा रहा है।

भारत के लिए शिक्षा

विश्व व्यापार संगठन की चीनी रणनीति, भारत की विश्व व्यापार संगठन के प्रति रुख में कमियों को उजागर करती है और विशेषतौर पर विश्व व्यापार संगठन को ठीक प्रकार से अनुपालन न करने संबंधी बातों पर। चीनी रणनीति से हमें यह शिक्षा भी मिलती है कि विश्व व्यापार संगठन में जाने की तैयारी कैसी होनी चाहिए। भारत सरकार को यह शिक्षा मिलती है कि विश्व व्यापार संगठन चाहे एक बहुपक्षीय संस्था है लेकिन फिर भी वह राष्ट्रीय हितों से ऊपर नहीं है और इसलिए हर देश को विश्व व्यापार संगठन में बेहतर लाभ प्राप्त कर अपने राष्ट्र की समृद्धि के लिए सर्वथा प्रयासरत रहना चाहिए। आज हम देख रहे है कि विश्व व्यापार संगठन के दबाव में मात्रात्मक नियंत्रण हटाए जा रहे हैं और आयात शुल्क कम किए जा रहे हैं और इस सबमें हमारा किसान और लघु उद्यमी पिस रहा है और सरकार अपनी असमर्थता दिखा रही है। देशहित में इस असमर्थता की स्थिति से उबर कर बाहर आने की जरूरत है। चीनी अनुभव हमें बताता है कि हमें विश्व व्यापार संगठन के इशारों पर नाचने की बजाए, उसको ही हमारे अनुरूप चलाने का प्रयास करना चाहिए। हम देखते हैं कि भारत में कानूनों को विश्व व्यापार संगठन के अनुरूप बनाने के लिए संशोधित किया जा रहा है। उसी प्रकार विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों के अनुरूप नीतियाँ बनाई जा रही है। इन सबकी बजाए सरकार को चाहिए कि विकासशील देशों को नेतृत्व प्रदान करते हुए विश्व व्यापार संगठन में एक दबाव बनाएँ और उसे हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप अपने प्रावधानों को बदलने के लिए बाध्य करे। साथ ही हमारे राष्ट्रीयहितों के विरुद्ध किसी नई शर्त को न जोड़ने दिया जाए। साथ ही सरकार यह तय करे कि खाद्य सुरक्षा और आत्मनिर्भरता के संबंध में कोई समझौता नहीं किया जाएगा। ■

(पृष्ठ २५ का शेष.....)

बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुली छूट ....

साख नहीं है। अतः परिस्थितियों व सच्चाई का तकाजा है कि श्री वाजपेयी जी या तो स्वदेशी जागरण मंच जो उनके साथियों का मंच है की नीतियाँ स्वीकार करे और विश्व व्यापार संगठन को या तो मोड़े या इसे छोड़े।

अगर वे ऐसा नहीं कर सकते हैं तो राजनीतिक न्याय की मांग है कि वे अपने पद से इस्तीफा देकर देश में दुबारा चुनाव के लिए जनता के सामने जाये। नेता अपनी पार्टी के बिना राजनीति में कोई स्थान नहीं रखता है। नये चुनाव में मुख्य मुद्दा होना चाहिए कि व्यापार के नियमन के लिए निर्मित विश्व व्यापार संगठन कृषि को पूरी तरह से मुक्त करे और भारतीय किसान व लघु उद्योगों में नये रोजगारों का निर्माण करने में जो भी नीति की आवश्यकता है भारत वही नीति अपनायेगा। देश की सम्प्रभुता को हम किसी के गिरवी नहीं रखने देंगे। इस विषय पर पूरे देश में कोई मतभेद नहीं है। हमारी आत्मा के साथ हम किसी तरह का ढोंग नहीं करना चाहते हैं। पूंजीवादी देश अवाध प्रतियोगिता के पक्ष में है। हमें यह स्वीकार नहीं हो सकता। भारत की गरीबी में करोड़ों किसानों व मजदूरों के साथ संवेदनशीलता के आधार पर ही आर्थिक नीति का निर्माण हो सकता है। प्रतियोगी का गला काटने की नीति संवेदनशीलता के साथ-साथ चल ही नहीं सकती। अतः अबाध प्रतियोगिता को भारत पूर्णतः अस्वीकार करता है। ■

Scanned with OKEN Scanner

भोपाल में हुआ गोविन्दाचार्य का उद्‌बोधन

स्वदेशी जागरण मंच, भोपाल के स्वदेशी विचार मंडल ने श्री गोविन्दाचार्य के कार्यक्रम का आयोजन किया। श्री गोविन्दाचार्य ने विश्व व्यापार संगठन में भारत की सदस्यता के पांच वर्ष पूरे होने पर क्षेत्रश: लाभ-हानि की समीक्षा करने पर बल देते हुए कहा कि देश में तेज गति से रोजगार के अवसर घटते जा रहे हैं।

पर्यावरण का शोषण करने वाले अपराधी विकसित देश आज स्वयं जज बन रहें हैं। विकासशील देशों को विश्व व्यापार संगठन में वीटो का अधिकार मिलना चाहिए। वर्तमान सरकार ने सिएटल में अच्छी पहल की थी। इस वर्ष के अंत में एक मौका और आएगा जब डब्ल्यू.टी.ओ. के लेखा-जोखा और मूल्यांकन का समय होगा। हमें विकसित देशों में बढ़ रहे अंतर्विरोधों का लाभ उठाना चाहिए। श्री गोविन्दाचार्य ने बताया कि उन्होंने विश्व व्यापार संगठन के प्रभावों के अध्ययन के लिए ७ सितंबर २००० से अध्ययन और प्रवास प्रारंभ किया है। इस अभियान में उन्होंने २०-२५ स्थानों पर प्रवास किया, और लगभग १२०० व्यक्तियों से भेंट की। उनके अध्ययन और जनजागरण का कार्य अविराम आगे बढ़ता जा रहा है। ■

आंध्र प्रदेश में हुआ विचार-संगोष्ठी और विरोध प्रदर्शन

आंध्र प्रदेश (पश्चिम) के हैदराबाद में स्वदेशी जागरण मंच की प्रांतीय ईकाई ने २६ मार्च, २००१ को 'डब्ल्यू. टी.ओ. की व्यवस्था में कृषि और जैव-तकनीकी' विषय पर विचार-संगोष्ठी आयोजित की। साथ ही स्वदेशी जागरण मंच, भारतीय मजदूर संघ और अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् ने संयुक्त रूप से डब्ल्यू.टी.ओ. के विरुद्ध १० अप्रैल, २००१ को धरना और प्रदर्शन किया। डब्ल्यू.टी.ओ. की व्यवस्था में कृषि और जैव तकनीकी विषय पर आयोजित संगोष्ठी में वंशाणु (जीन) अभियान नई दिल्ली की संयोजिका डॉ. सुमन सहाय, डॉ. कुसुमलता केडिया सदस्या ई.सी. (मुख्य अतिथि), डॉ. रमेश भट्ट और स्वदेशी जागरण मंच आंध्र प्रदेश के संयोजक श्रीराजमहेन्द्र रेड्डी आदि प्रमुखत: सम्मिलित हुए।

स्वदेशी जागरण मंच, भारतीय मजदूर संघ एवं अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् के सम्मिलित धरना में राज्य संघटन सचिव श्री अप्पाला प्रसाद ने कहा कि दस वर्ष पूर्व (१९९१) डब्ल्यू.टी.ओ. से आने वाली विपत्तियों के विषय में स्वदेशी जागरण मंच ने जो चेतावनियाँ दी थी और तत्कालीन सरकार ने ध्यान नहीं दिया, आज उनके दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं। इस धरना में राज्यपाल को सभी सम्मिलित संगठनों द्वारा अलग-अलग ज्ञापन दिया गया और अंत में डब्ल्यू.टी.ओ. के पुतले को फूँकने का कार्य भी सम्पन्न हुआ। ■

Scanned with OKEN Scanner

जयपुर में संपन्न हुई स्वदेशी विचार संगोष्ठी

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के गांधी अध्ययन केंद्र की ओर से १७ मार्च को 'स्वदेशी विचार एवं व्यवहार : समकालीन संदर्भ में' विषय पर दो दिनों की विचार संगोष्ठी चली। पूर्व कुलपति आचार्य ओमप्रकाश ने चिंता जताते हुए कहा – कि विश्व व्यापार संगठन में ऐसे अनुच्छेद भी जोड़े गए हैं जिसके अंतर्गत भारत से संबंधित मामले भारतीयों द्वारा प्रस्तुत नहीं किए जाएँगे। सन २००५ के बाद भारत को अकेले अपने दम पर अंतरराष्ट्रीय आर्थिक स्पर्धाओं को झेलना पड़ेगा। कुलपति का.ला. इस संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए सरस्वती प्रतिमा के आगे दीप प्रज्ज्वल और महात्मा गांधी के चित्र पर माल्यार्पण किया, केंद्र के निदेशक डॉ. प्रकाश शास्त्री ने विषय रखा, राजनीति शास्त्र की सहायक आचार्य श्रीमती शीला राय ने संचालन किया। केंद्र की उपनिदेशिका श्रीमती सुशीला जैन से धन्यवाद ज्ञापन और स्वाति दत्ता ने गणेश स्तुति एवं सरस्वती वंदना प्रस्तुत की।

संगोष्ठी में स्वदेशी धारणा की सैद्धांतिक व्याख्या और स्वदेशी का अर्थशास्त्र एवं उदारीकरण की चुनौतियाँ जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर विद्वान सहभागियों ने विस्तृत विचार-विमर्श किया। ■

भोपाल में बजट परिचर्चा सम्पन्न

परिचर्चा को सम्बोधित करते हुए श्री आर.के. पारिख
बाए से दाए : डॉ. रामकृष्ण सोलंकी, डॉ. आर.एस. तिवारी, डॉ. आर.एम. गोयल, डॉ. आर.एस. गोस्वामी

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. आर.एस. तिवारी ने केंद्रीय बजट को स्वदेशी विरोधी बताया है। श्री तिवारी ने कहा कि यह मनमोहन सिंह की शैली का बजट है जिसके दुष्प्रभाव बाद में समझ में आते हैं। वे स्वदेशी जागरण मंच द्वारा भोपाल में २ मार्च २००१ को आयोजित बजट परिचर्चा के सहभागियों एवं श्रोताओं सम्बोधित कर रहे थे। श्री तिवारी ने कहा कि बजट से विकास की दर बढ़ेगी, लेकिन विकास नहीं होगा। उन्होंने कहा कि हमें यह विचार करना होगा कि क्या हम विकास की उस परिभाषा को स्वीकार करना चाहते है, जिससे लगातार बेरोजगारी बढ़ रही है। इसमें अर्थशास्त्री डॉ. आर.एम. गोयल, सी.ए. श्री आर.के. पारिख एवं उद्योगपति डॉ. आर.एस. गोस्वामी ने भी भाग लिया।

कर्नाटक (उत्तर) प्रांत का विचार वर्ग सम्पन्न

स्वदेशी जागरण मंच के कर्नाटक (उत्तर) प्रांत का स्वदेशी विचार वर्ग का सफल आयोजन दिनांक ३१/४/०१ से १५/४/०१ को गुलबर्गा में संपन्न हुआ। इस विचार वर्ग का प्रस्ताविक श्री एस.एन. पाडियार जी ने दिया। तीन दिन के इस विचार वर्ग में प्रथम दिन तीन सत्र, दूसरे दिन आठ सत्र एवं अंतिम दिन पांच अर्थात् कुल मिलाकर सोलह सत्र रखे गए। विचार वर्ग में रखे गए विषयों में, विश्व व्यापार संगठन, वैश्वीकरण, प्राचीन भारत की ज्ञान-विज्ञान में उपलब्धियाँ, कृषि नीति, निर्वंश बीज एवं उसके दुष्प्रभाव, संगणक एवं अंतरजाल के अनुप्रयोग के दुष्परिणाम, स्वदेशी संगठन का सबलीकरण एवं कार्यकर्त्ता निर्माण आदि प्रमुख थे। कर्नाटक (उत्तर) प्रांत ने स्थानीय विश्वविद्यालय, महाविद्यालय एवं संगठन के योग्यतम व्यक्तियों का उपर्युक्त विषयों को रखने हेतु आमंत्रित किया था। ■

Scanned with OKEN Scanner

स्वदेशी मेला डॉट कॉम का उद्घाटन

भारतीय विपणन विकास केन्द्र द्वारा तैयार स्वदेशीमेलाडॉटकॉम का उद्घाटन करती हुई केन्द्रीय सूचना प्रसारण मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज। उनके बगल में खड़े हैं केन्द्रीय मंत्री श्री बच्ची सिंह रावत, भारतीय विपणन विकास केन्द्र के निदेशक श्री अनिल गचके और स्वदेशी जागरण फाउण्डेशन के ट्रस्टी श्री ईश्वरदास महाजन।

गत १८ अप्रैल, २००१ को दिल्ली में केंद्रीय सूचना प्रसारण मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने स्वदेशी मेला डॉट कॉम का उद्घाटन किया। इस अवसर पर केंद्रीय विज्ञान और तकनीकि राज्य मंत्री श्री बच्ची सिंह रावत, एन.एस.आई.सी. के अध्यक्ष श्री एम अहमद, स्वदेशी जगारण फाऊण्डेशन के ट्रस्टी श्री ईश्वरदास महाजन और भारतीय विपणन विकास केंद्र के निदेशक श्री अनिल गचके उपस्थित थे।

स्वदेशीमेलाडॉटकॉम के बारे में बताते हुए भारतीय विपणन विकास केंद्र के निदेशक श्री अनिल गचके ने कहा कि १९९९ में दिल्ली के प्रगति मैदान में स्वदेशी मेले का आयोजन किया गया था जो सफल रहा। उसी से प्रेरित होकर भारतीय विपणन विकास केंद्र शिमला से कोयम्बटूर तक स्वदेशी मेलों का आयोजन कर चुका है। इसी बीच वर्ष २००० में दिल्ली में स्वदेशी विज्ञान मेला और २००१ में वनवासी मेला का आयोजन सफलतापूर्वक किया जा चुका है। ऐसे में स्वदेशीमेलाडॉटकॉम की शुरुआत स्वदेशी उद्योगपतियों को अंतरराष्ट्रीय फलक प्रदान करेगी। स्वदेशीमेलाडॉटकॉम के पोर्टल पर एक्सपर्ट चैट, आनलाइन विवरणिका, ऑन लाइन भागीदारी, समाचार केंद्र, सूचना केंद्र, व्यापार केंद्र जैसी दूसरी सुविधाएं भी उपलब्ध है।

इस अवसर पर बोलते हुए केंद्रीय सूचना और प्रसारण मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने पोर्टल की उपयोगिता बताते हुए कहा कि इस पोर्टल के माध्यम से सबसे ज्यादा लाभ उन लघु उद्योगों और कारीगर समूहों को मिलेगा जो विश्व स्तर का उत्पादन करने के बाद भी विश्व बाजार में अपनी भागीदारी सुनिश्चित नहीं कर पाते। उन्होंने इस डर को निर्मूल बताया कि इंटरनेट के खुल जाने से हमारी संस्कृति को खतरा पैदा हुआ है। उन्होंने इसका सकारात्मक पक्ष बताते हुए कहा कि "इंटरनेट के माध्यम से पश्चिम भारत में आ रहा है तो भारत भी पश्चिम में जा रहा है और भारत के खिलाफ जो नकारात्मक धारणाएं तैयार की गयी थी, वे टूट रही हैं।" उन्होंने कहा कि आज विश्व व्यापार के संदर्भ में स्वदेशी की प्रासंगिकता बढ़ गयी है।

एन.एस.आई.सी. के अध्यक्ष श्री एन अहमद और केंद्रीय विज्ञान और तकनीकि राज्यमंत्री श्री बच्ची सिंह रावत ने भी इस अवसर पर लोगों को संबोधित किया। और अंत में श्री ईश्वरदास महाजन ने अध्यक्षीय भाषण किया। ■

Scanned with OKEN Scanner

केंद्रीय मंत्रीमंडल के अनुसार अण्डा शाकाहरी नहीं

जब हम विकास की ओर कदम नहीं बढ़ा पा रहे थे यानी विकासशील नहीं थे, पिछड़े हुए थे यह जानते थे कि सामने पड़ी मूली किस खेत की है इसका स्वाद क्या होगा। लेकिन जबसे हम विकास की ओर बढ़ रहे हैं पैकेट बंद डिब्बाबंद, सिल मुहर सहित लेबलदार खाद्य सामग्रियाँ खरीदकर खाने के आदी होते जा रहे हैं। सरकार के लिए भी अब कानून बनाकर पैकेट बंद सामनों के बारे में जानकारी लिखना जरूरी हो गया। ऐसी जरूरत तब आई जब चाय की पत्ती में जानवरों की चर्बी या सूखे

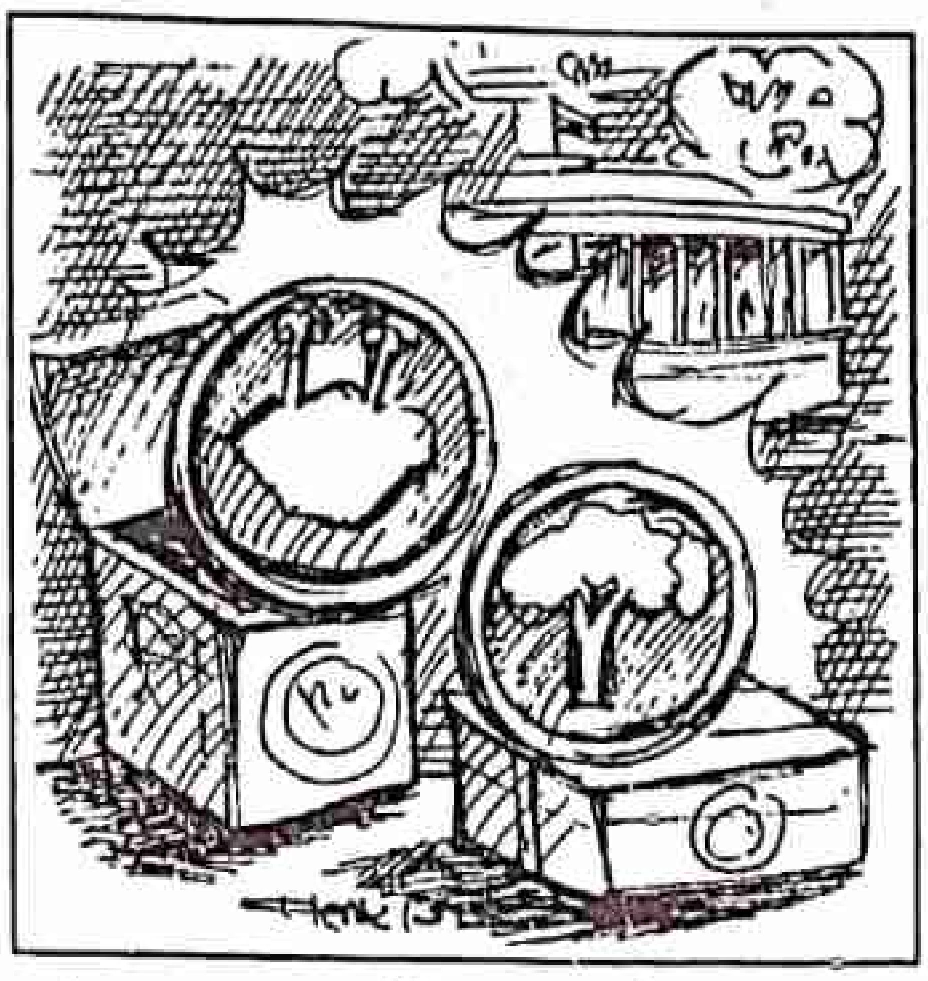

मांस का बुरादा मिलया जाने लगा। अब मांसाहारी खाद्य सामग्रियों पर लाल रंग का चिन्ह बना होगा और शाकाहारी खाद्य सामग्रियों के पैकेट पर हरें रंग का वृक्ष बना होगा। यह निर्णय प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में २० मार्च २००१ की रात को लिया गया। केंद्रीय मंत्री मंडल की इस बैठक में आधे घंटे इस बात के निर्णय में लग गया कि अण्डा मांसाहारी खाद्य पदार्थ है या शाकाहारी? अंततः अण्डे को मांसाहार की श्रेणी में रखने का निर्णय हुआ। मांसाहार और शाकाहार की पहचान के लिए डिब्बों पर निर्देशित चिन्हों की अधिसूचना जारी हो जाने के बाद निर्माता और व्यापारी को नियम का पालन करना होगा। ■

डम्पिंग से बैट्री उत्पादन क्षेत्र को १६० करोड़ की हानि

भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय ने अभी इस महीने से चीन-जापान और कोरिया से आने वाली औद्योगिक बैट्रियों पर अस्थाई डम्पिंग शुल्क लगाया है। चीन की बैट्रियों पर ३.३४ डॉलर प्रति किलो, जापान व कोरिया की बैट्रियों पर ३.९६ से २.४६ डॉलर प्रति किलो शुल्क लगा है। लेकिन इससे भारतीय बैट्री निर्माताओं का असंतोष दूर नहीं हुआ है। बैट्री निर्माताओं का संगठन आई.बी.एन.ए. विदेशी डम्पिंग और आयात शुल्क की विसंगतियों के कारण २०००-२००१ में हुई १६० करोड़ की हानि देश में ९९ लाख विदेशी बैट्रियों के प्रवेश और शीशा व सेपरेटर जैसे कच्चे माल पर आयात शुल्क अधिक होने की चिंता व्यक्त कर रहा है।

वह निर्मित माल और कच्चे माल पर आयात शुल्क की दरों में २० प्रतिशत का अंतर चाह रहा है। नाक तक पानी आने के बाद सरकार की कुंम्भकरणी नींद खुली तो सही। अच्छा हुआ कि भारत ने नींद की गोली देने वाले चीन के विदेश मंत्री शिक्वांग शेंग की बातों पर विश्वास न करके अपनी जाँच पर भरोसा किया। पिछले महीने शिक्वांग शेंग ने कहा था कि मैं नहीं मानता कि चीन के कारोबारी अपना माल विदेश में डम्प करने की क्षमता रखते हैं। चीन तो बाहरी देशों में अपने सामानों की डम्पिंग करने या लागत मूल्य से कम में बिक्री के खिलाफ है। ■

गन्ने के शीरे में पेट्रोल का विकल्प

दो दशक से अधिक समय गुजर गए जब इथेनॉल को पेट्रोल-डीजल की जगह पर उपयोग करने की योजना बनी थी। कहा जाता है कि पेट्रोलियम लॉबी ने इस योजना को दबा दिया था। अभी देश में साठ लाख मैट्रिक टन प्रतिवर्ष पेट्रोलियम ईंधन की खपत है। इस खपत में तेजी से वृद्धि हो रही है। इस ईंधन के लिए हमें विदेशी मुद्रा और कुछ खास आपूर्तियाँ असुर देशों को करनी पड़ती है। इस आपूर्ति में गाय का मांस भी आता है। कुछ राष्ट्रभक्त यह कहते है कि पेट्रोल की खपत और गोवंश का नाश दोनों एक साथ जुड़े हुए मुद्दे हैं। इस पाप के पैसे से कोई सज्जन व्यक्ति धनी नहीं होता। जो इस पैसे को प्राप्त करते हैं वे और पाप को बढ़ते ही है। इस पाप से मुक्ति का अब रास्ता खुल रहा हैं, गन्ने के शीरे से इथेनॉल निकलेगा और उससे गाड़ियाँ चलेंगी। महाराष्ट्र के सांगली इलाके में शीरे से इथेनॉल बनाने का पायलट प्रोजेक्ट शुरू कर केंद्रीय पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्री रामनाईक धन्यवाद के पात्र हुए हैं। सांगली के बाद महाराष्ट्र के ही मनमाड़ क्षेत्र में होने वाला है। इसके बाद उत्तर प्रदेश के बरेली क्षेत्र में भी यह परियोजना शीघ्र शुरु होगी, गन्ने के शीरे से इथेनॉल बनकर पेट्रोल की जगह पर उपयोग करने से गन्ने की खेती करने वाले किसानों को भी लाभ होगा। ■

अमेरिकी महाद्वीप के मुक्त व्यापार क्षेत्र का विरोध

गत २०-२२ अप्रैल २००१ को क्यूबेक, कनाडा में चीली से कनाडा तक फैला अमरीकी मुक्त व्यापार क्षेत्र बनाने के लिए हो रहे सम्मेलन को भूमंडलीकरण के हजारों विरोधियों का दबाव झेलना पड़ा। इस विरोध प्रदर्शन से पूरी तरह चौकसी के बाद भी सम्मेलन ९० मिनट तक स्थगित रहा। भू-मंडलीकरण के विरोधियों को एक मात्र क्यूबा के राष्ट्रपति फिडेल कास्तो का समर्थन मिल रहा है कास्तो को सम्मेलन में नहीं बुलाया गया था। अमरीकी मुक्त व्यापार क्षेत्र के विरोधी बार-बार दुहराते रहे कि इससे धनी वर्ग के लोग गरीब लोगों का शोषण करके मार डालेंगे। दूसरी ओर मुक्त व्यापार क्षेत्र के समर्थकों का कहना है कि

इसमें जनतांत्रिक सिद्धांतों पर कार्य होगा। इन क्षेत्रों की ८० करोड़ जनसंख्या सन् २००५ आते-आते मुक्त व्यापार के लाभ उठाने लगेगी। इससे एफ.टी.ए.ए. कस्टम और आयात शुल्क कम होंगे। इस क्षेत्र में अमरीकी महाद्वीप के कुल ३४ राष्ट्र सम्मिलित होंगे। इसी मतलब से इन ३४ राष्ट्रों के राष्ट्राध्यक्ष सम्मेलन में एकत्र हुए। सबल आर्थिक शक्ति बनने का यह अमरीकी प्रयास आर्थिक विश्व युद्ध की ओर बढ़ता कदम है। विश्व के अन्य आर्थिक गुटों के टक्कर को देखते हुए अमरीका की ओर से यह कदम उठाया जा रहा है। इन गुटों के बीच होने वाले आर्थिक विश्व युद्ध में कमजोर आर्थिक शक्ति वाले देश निचूड़ सकते हैं। इसीलिए इस सम्मेलन का विरोध भी उसी प्रकार हो रहा है जैसे १९९९ में सिएटल और २००० में पराग्वे में हुई विश्व व्यापार संगठन की बैठक में हुआ था। ■

विश्व बैंक का बढ़ता हस्तक्षेप

भारत में जिस प्रकार आर्थिक सुधार की प्रक्रिया तेज हो रही है, विश्व बैंक उसी तीव्रता से भारत में हस्तक्षेप कर रहा है। यह बैंक भारत के कुछ राज्यों में आर्थिक सहायता देने के बदले वहाँ के शासन कानून एवं प्रशासनिक ढाँचे में मनचाही तब्दीलियाँ कराने पर दबाव डाल रहा है। देश के संप्रभुता को सीधी चुनौती देकर उसने कितने राज्यों को जो पैसा के लिए लालायित हैं बजट घाटा पूरा करने का प्रस्ताव रखा है। आजादी के बाद के इतिहास की यह पहली घटना है कि विश्व बैंक केंद्र सरकार की अवहेलना कर सीधे राज्य सरकार से बातचीत की है। यह सहायता लेने में आँध्र प्रदेश, उड़ीसा एवं मध्य प्रदेश की सरकारे आगे है।

ज्ञातव्य हो कि विश्व बैंक की यह राशि केंद्र के जरिए मिलती रही है एवं इसका उपयोग विकास कार्यों, धार्मिक उद्देश्यों एवं

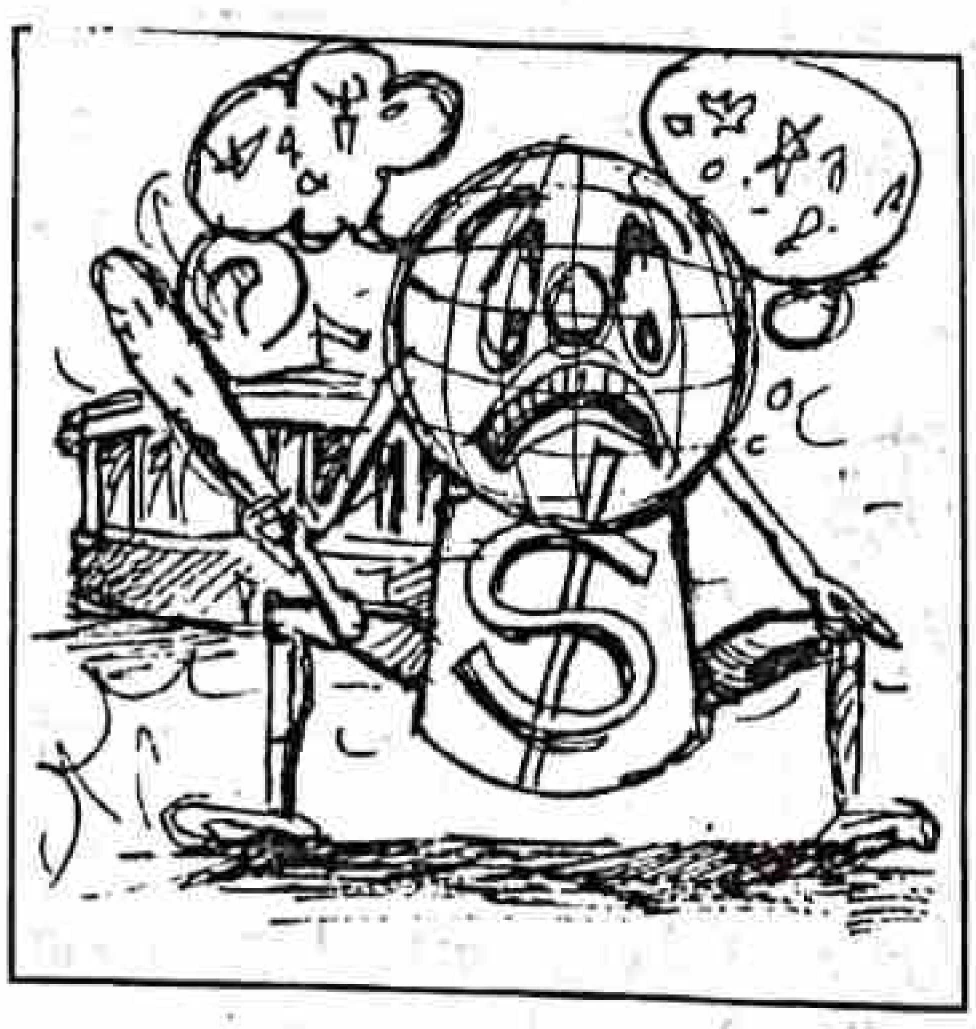

कल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए किया जाता रहा है। लेकिन अब विश्व बैंक केंद्र सरकार के द्वारा न आकर सीधे राज्य सरकारों से सम्पर्क बना रही है और उन पर मनमाना दबाव डाल रही है। उड़ीसा सरकार पर विश्व बैंक ने आर्थिक मदद के बदले स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना तीव्रता से लागू करने की शर्त रखी है। यह खुशी की बात है कि उड़ीसा के आकस्मिक निधि आयुक्त ने इस शर्त पर सहयोग देना बंद कर दिया है।

विश्व बैंक का कर्ज राष्ट्रीय सुरक्षा के कारणों से भी खतरनाक है। कर्ज देने के नाम पर यह बैंक ऐसी परियोजना को लागू करवाने का दबाव बनाता है जो किसी भी दृष्टि से राष्ट्रीय हित में नहीं हों। कर्ज में पैसा पाने के लिए श्री चंद्रबाबू नायडू विवादास्पद सांख्यावाहिनी परियोजना को लागू करने का वचन विश्व बैंक को दे रहे हैं। ज्ञातव्य हो कि संघ परिवार की आपत्ति के कारण इस परियोजना को केंद्र ने नामंजूर कर दिया था। राज्यों के मुख्यमंत्रियों द्वारा आर्थिक मदद पाने को लालायित ये मुख्यमंत्री राष्ट्र के सामने मुश्किलें पैदा कर रहे हैं। विश्व बैंक के लोगों का अंतरराष्ट्रीय खुफिया ताकतों, विघटनकारी शक्तियों से संबंध होता है। वे लोग आर्थिक मदद के नाम पर देश को परेशानी में डालने का षड्यंत्र करते रहते हैं। ■

Scanned with OKEN Scanner

विनिवेश के बावजूद मॉडर्न फूड घाटे में

सार्वजनिक उद्योगों के समस्याओं का विनिवेश एकमात्र समाधान मानने वाली सरकार को कम कम अब चेत जाना चाहिए क्योंकि जिस मॉडर्न ड का विनिवेश सरकार ने सबसे पहले किया वह ज आकंठ घाटे में डूब गई है। इस कंपनी को खरीदने ली हिंदुस्तान लीवर, जो एक बहुराष्ट्रीय कंपनी है, आनन-फानन में इसे रुग्ण घोषित करवाने हेतु ताव बी.आई.एफ.आर. को भी भेज दिया है।

ज्ञातव्य हो कि विनिवेश के पूर्व इस कंपनी की तीय स्थिति लाभ में जा रही थी। लेकिन कंपनी विनिवेश की घोषणा होने के साथ ही इसकी वित्तीय थति खराब होती गई और कंपनी घाटे में गई जीकरण के बाद अचानक कंपनी का घाटा बढ़कर करोड़ रुपया हो जाना एवं इसके निदेशक मंडल ा कंपनी को रुग्ण घोषित करवाने का प्रस्ताव तुरत ति कर देना कई शंकाओं को जन्म देता है।

मॉडर्न फूड के निजीकरण के समय हिन्दुस्तान वर ने समझौता किया था कि एक वर्ष तक सरकार र्न फूड से किसी भी कर्मचारी को नहीं हटाएगी। नी के ठीक एक साल पूरा होते ही इसको रुग्ण ा दिया गया जिससे इस आधार पर कर्मचारियों की टनी की जा सके। इतना ही नहीं कंपनी में यदि ताबंदी होती है तो हिन्दुस्तान लीवर इसे हड़प भी कती है। इन सब साजिशों के पीछे मूल कारण यह कि बी.आई.एफ.आर. द्वारा रुग्ण घोषित होने के बाद र्मचारियों को केवल १५ दिन की नोटिस के आधार हटाया जा सकता है। कंपनी के किसी भी इकाई कभी भी बंद किया जा सकता है आदि।

वर्ष १९९६-९७ में मॉडर्न फूड को ८ करोड़ ए का मुनाफा हुआ था जो १९९७-९८ में बढ़कर करोड़ रुपए हो गया। इसी वर्ष कंपनी के विनिवेश घोषणा की गई थी। लेकिन विनिवेश की घोषणा अगले वर्ष अर्थात् १९९८-९९ में कंपनी को ३ ोड़ का घाटा हो गया इसके बावजूद कि कंपनी का बंधन, स्वामित्व विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनी हिन्दुस्तान वर के हाथों में चली गई। वर्ष १९९९-२००० में ह घाटा बढ़कर सात करोड़ रुपए पर जा पहुँचा। नवरी २००१ में कंपनी प्रबंधन ने घोषणा की कि छले एक साल के दौरान कंपनी का घाटा ४८ करोड़ गया है। आपको यह जानकर आश्चर्य एवं क्षोभ गा कि हिन्दुस्तान लीवर जैसी कंपनी जिसने पिछले ल केवल विज्ञापनों पर करीब ७१५ करोड़ रुपए व्यय किया था क्या वह मात्र ४८ करोड़ का घाटा उठाने असमर्थ है? सरकार समय रहते इस पर चेते एवं धाधुंध विनिवेश बंद करे। नहीं तो मॉडर्न फूड के द 'बालको' की बारी है। ■

निम्नलिखित सभी पुस्तकें स्वदेशी आंदोलन की दृष्टि से जानकारी देने वाली है। ये पुस्तकें अंग्रेजी में ही उपलब्ध हैं। स्वदेशी संगठनों के कार्यकर्त्ताओं हेतु इन पुस्तकों पर २० प्रतिशत की छूट उपलब्ध है। पुस्तक खरीदने हेतु नीचे दिए गए पते पर सम्पर्क करें।

	Name of the Book	Price
1.	To be or Not to be Human Health and Patent Law's Latent Lethality — by Justice V.R. Krishna Iyer	Rs. 25/-
2.	GATT, TRIPS, Patent Law — by Justice V.R. Krishna Iyer	Rs. 25/-
3.	National Agriculture Policy : A Wish List or and Exercise in Compliance with WTO — by S.P. Shukla	Rs. 25/-
4.	Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Bill 2000 — by B.K. Keayla	Rs. 15/-
5.	Trips Patents System : Implications for Health Care and Pharma Industry — by B.K. Keayla	Rs. 20/-
6.	Elbow Room in Trips Patent System : Issues for Patent (Second Amendment) Bill 1999 — by B.K. Keayla & Biswajit Dhar	Rs. 30/-
7.	Removal of Quantitative Restrictions : Some Critical Issues — by B.K. Keayla	25/-
8.	Conquest by Patents : TRIPs Agreement on Patent Laws : Impact on Pharmaceuticals and Health for All — by B.K. Keayla	75/-
9.	New Paradigms for the Third Millennium — by Dr. Surendra J. Patel	20/-
10.	Financial Upheaval in East Asian Countries — by Dr. Surendra J. Patel	20/-
11.	Asian Currency Turmoils and WTO Issues Lessons for India — by Dr. Arun Ghosh	40/-
12.	Protection of Plant Varieties and Farmers' Rights Bill 2000 : Some Comment — by Dr. Biswajit Dhar	15/-
13.	Plant Breeders & Farmers in the new IPR : Conflict of Interests — by Dr. Biswajit Dhar & C. Niranjan Rao	15/-

CENTRE FOR STUDY OF GLOBAL TRADE SYSTEM AND DEVELOPMENT

A-388, Sarita Vihar, New Delhi - 110 044 (India)
Email : wgkeayla@del6.vsnl.net.in
Ph. : 6947403, 6813311, Fax : +(91-11) 681-3311, 6942222

Scanned with OKEN Scanner

स्वदेशी पत्रिका वैशाख-ज्येष्ठ २०५८ डाक पंजीयन संख्या डीएल-१३०२७/२००१ आर. एन. आई. पंजीयन संख्या

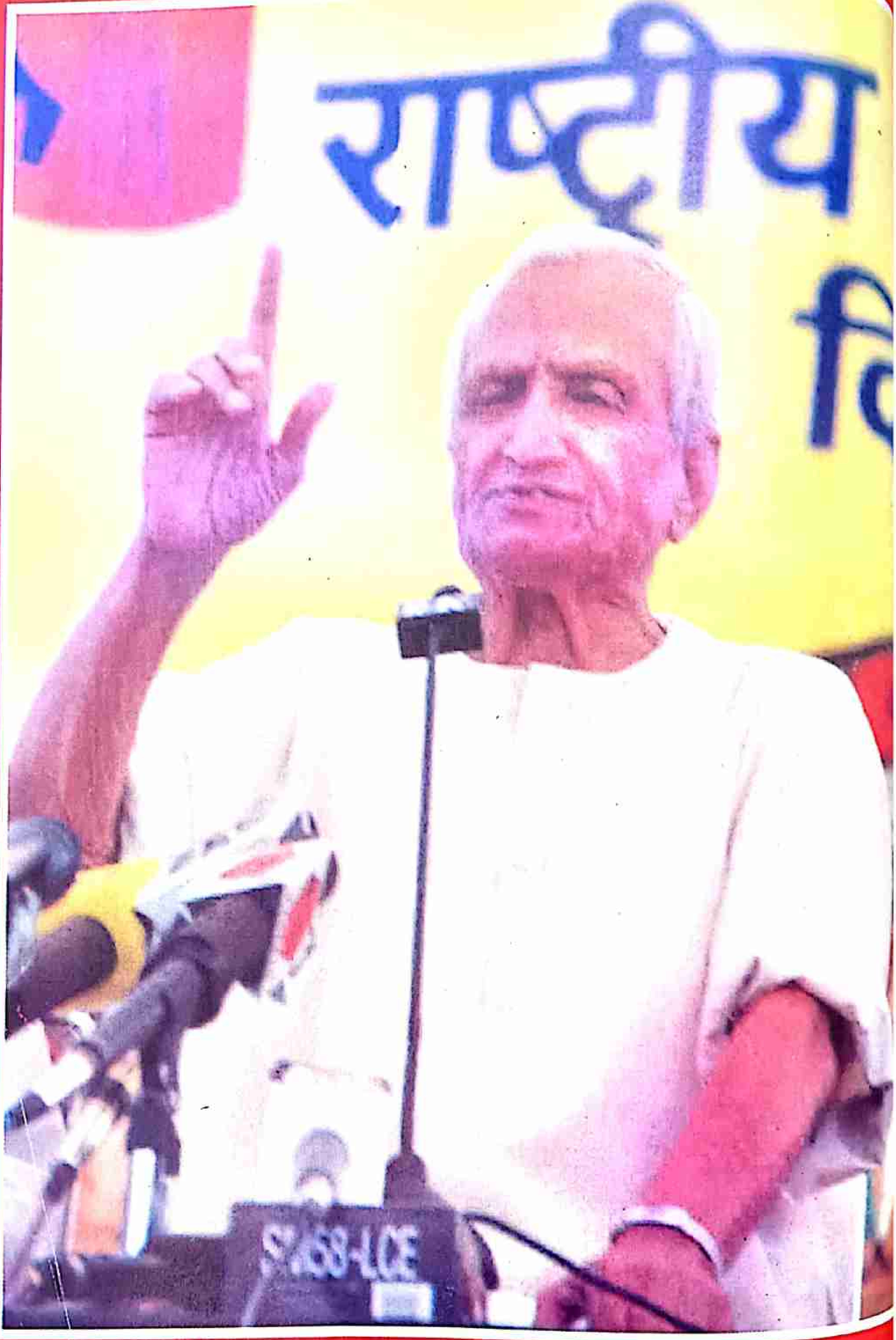

16 अप्रैल 2001 को भारतीय मजदूर संघ की रेली को सम्बोधित करते हुए राष्ट्र ऋषि दत्तोपंत ठेंगड़ी जी

ईश्वर दास महाजन द्वारा स्वदेशी जागरण फाउंडेशन के लिए कुमार ब्रदर्स प्रिंटिंग प्रेस, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२ से मुद्रित एवं ६०, नॉर्थ एवेन्यु से

Scanned with OKEN Scanner